डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

उपन्यास

दौड़

ममता कालिया

वह अपने ऑफिस में घुसा। शायद इस वक्त बिजली कटौती शुरू हो गई थी। मुख्य हॉल में आपातकालीन ट्यूब लाइट जल रही थी। वह उसके सहारे अपने केबिन तक आया। अँधेरे में मेज पर रखे कंप्यूटर की एक बौड़म सिलुएट बन रही थी। फोन, इंटरकॉम सब निष्प्राण लग रहे थे। ऐसा लग रहा था संपूर्ण सृष्टि निश्चेष्ट पड़ा है।

बिजली के रहते यह छोटा-सा कक्ष उसका साम्राज्य होता है। थोड़ी देर में आँख अँधेरे की अभ्यस्त हुई तो मेज पर पड़ा माउस भी नजर आया। वह भी अचल था। पवन को हँसी आ गई, नाम है चूहा पर कोई चपलता नहीं। बिजली के बिना प्लास्टिक का नन्हा-सा खिलौना है बस। 'बोलो चूहे कुछ तो करो, चूँ चूँ ही सही,' 'उसने कहा |' चूहा फिर बेजान पड़ा रहा।

पवन को एकएक अपना छोटा भाई सघन याद आया। रात में बिस्कुटों की तलाश में वे दोनों रसोई घर में जाते। रसोई में नाली के रास्ते बड़े-बड़े चूहे दौड़ लगाते रहते। उन्हें बड़ा डर लगता। रसोई का दरवाजा खोल कर बिजली जलाते हुए छोटू लगातार म्याऊँ-म्याऊँ की आवाजें मुँह से निकालता रहता कि चूहे ये समझें कि रसोई में बिल्ली आ पहुँची है और वे डर कर भाग जाएँ। छोटू का जन्म भी मार्जार योनि का है।

पवन ज्यादा देर स्मृतियों में नहीं रह पाया। एकाएक बिजली आ गई, अँधेरे के बाद चकाचौंध करती बिजली के साथ ही ऑफिस में जैसे प्राण लौट आए। दातार ने हॉट प्लेट कॉफी का पानी चढ़ा दिया, बाबू भाई जेराक्स मशीन में कागज लगाने लगे और शिल्पा काबरा अपनी टेबल से उठ कर नाचती हुई-सी चित्रेश की टेबल तक गई, 'यू नो हमें नरूलाज का कांट्रेक्ट मिल गया।'

पवन पांडे को इस नए शहर और अपनी नई नौकरी पर नाज हो गया। अब देखिए बिजली चार बजे गई, ठीक साढ़े चार बजे आ गई। पूरे शहर को टाइम जोन में बाँट दिया है, सिर्फ आधा घंटे के लिए बिजली गुल की जाती है, फिर अगले जोन में आधा घंटा। इस तरह किसी भी क्षेत्र पर जोर नहीं पड़ता। नहीं तो उसके पुराने शहर यानी इलाहाबाद में तो यह आलम था कि अगर बिजली चली गई तो तीन-तीन दिन तक आने के नाम न ले। बिजली जाते ही छोटू कहता, 'भइया, ट्रांसफार्मर दुड़िम बोला था, हमने सुना है।' परीक्षा के दिनों में ही शादी-ब्याह का मौसम होता। जैसे ही मोहल्ले की बिजली पर ज्यादा जोर पड़ता, बिजली फेल हो जाती। पवन झुँझलाता, 'माँ, अभी तीन चैप्टर बाकी हैं, कैसे पढ़ूँ।' माँ उसकी टेबल के चार कोनों पर चार मोमबत्तियाँ लगा देती और बीच में रख देती, उसकी किताब। नए अनुभव की उत्तेजना में पवन, बिजली जाने पर और भी अच्छी तरह पढ़ाई कर डालता।पवन ने अपनी टेबल पर बैठे-बैठे दाँत पीसे। यह बेवकूफ लड़की हमेशा गलत आदमी से मुखातिब रहती

SHOUT
SHARE
IT

है। इसे क्या पता कि चित्रेश की चौबीस तारीख को नौकरी से छुट्टी होनेवाली है। उसने दो जंप्स (वेतन वृद्धि) माँगे थे, कंपनी ने उसे जंप आउट करना ही बेहतर समझा। इस समय तलवारें दोनों तरफ की तनी हुई हैं। चित्रेश को जवाब मिला नहीं है पर उसे इतना अंदाजा है कि मामला कहीं फँस गया है। इसीलिए पिछले हफ्ते उसने एशियन पेंट्स में इंटरव्यू भी दे दिया। एशियन पेंट्स का एरिया मैनेजर पवन को नरूलाज में मिला था और उससे शान मार रहा था कि तुम्हारी कंपनी छोड़-छोड़ कर लोग हमारे यहाँ आते हैं। पवन ने चित्रेश की सिफारिश कर दी ताकि चित्रेश का जो फायदा होना है वह तो हो, उसकी कंपनी के सिर पर से यह सिरदर्द हटे। वहीं उसे यह भी खबर हुई कि नरूलाज में रोज बीस सिलेंडर की खपत है। आई.ओ.सी. अपने एजेंट के जरिए उन पर दबाव बनाए हुई है कि वे साल भर का अनुबंध उनसे कर लें। गुर्जर गैस ने भी अर्जी लगा रखी है। आई.ओ.सी. की गैस कम दाम की है। संभावना तो यही बनती है कि उनके एजेंट शाह एंड सेठ अनुबंध पा जाएँगे पर एक चीज पर बात अटकी है। कई बार उनके यहाँ माल की सप्लाई ठप पड़ जाती है। पब्लिक सेक्टर के सौ पचड़े। कभी कर्मचारियों की हड़ताल तो कभी ट्रक चालकों की शर्तें। इनके मुकाबले गुर्जर गैस में माँग और आपूर्ति के बीच ऐसा संतुलन रहता है कि उनका दावा है कि उनका प्रतिष्ठान संतुष्ट उपभोक्ताओं का संसार है।

छोटू इसी बहाने बिजली घर के चार चक्कर लगा आता। उसे छुटपन से बाजार घूमने का चस्का था। घर का फुटकर सौदा लाते, पोस्ट ऑफिस, बिजली घर के चक्कर लगाते यह शौक अब लत में बदल गया था। परीक्षा के दिनों में भी वह कभी नई पेंसिल खरीदने के बहाने तो कभी यूनीफार्म इस्तरी करवाने के बहाने घर से गायब रहता। जाते हुए कहता, 'हम अभी आते हैं।' लेकिन इससे यह न पता चलता कि हजरत जा कहाँ रहे हैं। जैसे मराठी में, घर से जाते हुए मेहमान यह नहीं कहता कि मैं जा रहा हूँ, वह कहता है 'मी येतो' अर्थात मैं आता हूँ। यहाँ गुजरात में और सुंदर रिवाज है। घर से मेहमान विदा लेता है तो मेजबान कहते हैं, 'आऊ जो।' यानी फिर आना।

यह ठीक है कि पवन घर से अठारह सौ किलोमीटर दूर आ गया है। पर एम.बी.ए. के बाद कहीं न कहीं तो उसे जाना ही था। उसके माता-पिता अवश्य चाहते थे कि वह वहीं उनके पास रह कर नौकरी करे पर उसने कहा, 'पापा, यहाँ मेरे लायक सर्विस कहाँ? यह तो बेरोजगारों का शहर है। ज्यादा से ज्यादा नूरानी तेल की मार्केटिंग मिल जाएगी।' माँ-बाप समझ गए थे कि उनका शिखरचुंबी बेटा कहीं और बसेगा।

फिर यह नौकरी पूरी तरह पवन ने स्वयं ढूँढ़ी थी। एम.बी.ए. अंतिम वर्ष की जनवरी में जो चार-पाँच कंपनियाँ उनके संस्थान में आईं, उनमें भाईलाल भी थी। पवन पहले दिन पहले इंटरव्यू में ही चुन लिया गया। भाईलाल कंपनी ने उसे अपनी एल.पी.जी. यूनिट में प्रशिक्षु सहायक मैनेजर बना लिया। संस्थान का नियम था कि अगर एक नौकरी में छात्र का चयन हो जाए तो वह बाकी के तीन इंटरव्यू नहीं दे सकता। इससे ज्यादा छात्र लाभान्वित हो रहे थे और कैंपस पर परस्पर स्पर्धा घटी थी। पवन को बाद में यही अफसोस रहा कि उसे पता ही नहीं चला कि उसके संस्थान में विप्रो, एपल और बी.पी.सी.एल जैसी कंपनियाँ भी आई थीं। फिलहल उसे यहाँ कोई शिकायत नहीं थी। अपने अन्य कामयाब साथियों की तरह उसने सोच रखा था कि अगर साल बीतते न बीतते उसे पद और वेतन में उच्चतर ग्रेड नहीं दिया गया तो वह यह कंपनी छोड़ देगा।

सी.पी. रोड चौराहे पर खड़े हो के उसने देखा, सामने से शरद जैन जा रहा है। यह एक इत्तफाक ही था कि वे दोनों इलाहाबाद में स्कूल से साथ पढ़े और अब दोनों को अहमदाबाद में नौकरी मिली। बीच में दो साल शरद ने आई.ए.एस. की मरीचिका में नष्ट किए, फिर कैपिटेशन फीस दे कर सीधे आई.आई.एम. अहमदाबाद में दाखिल

हो गया। उसने शरद को रोका, 'कहाँ?' 'यार पिजा हट चलते हैं, भूख लग रही है।'
वे दोनों पिजा हट में जा बैठे। पिजा हट हमेशा की तरह लड़के-लड़कियों से गुलजार था। पवन ने कूपन लिए और काउंटर पर दे दिए। शरद ने सकुचाते हुए कहा, 'मैं तो जैन पिजा लूँगा। तुम जो चाहे खाओ।' 'रहे तुम वहीं के वहीं साले। पिजा खाते हुए भी जैनिज्म नहीं छोड़ेंगे।'

अहमदाबाद में हर जगह मेनू कार्ड में बाकायदा जैन व्यंजन शामिल रहते जैसे जैन पिजा, जैन आमलेट, जैन बर्गर।

पवन खाने के मामले में उन्मुक्त था। उसका मानना था कि हर व्यंजन की एक खासियत होती है। उसे उसी अंदाज में खाया जाना चाहिए। उसे संशोधन से चिढ़ थी।
मेनू कार्ड में जैन पिजा के आगे उसमें पड़नेवाली चीजों का खुलासा भी दिया था, टमाटर, शिमला मिर्च, पत्ता गोभी और तीखी-मीठी चटनी।
शरद ने कहा, 'कोई खास फर्क तो नहीं है, सिर्फ चिकन की चार-पाँच कतरन उसमें नहीं होगी, और क्या?' 'सारी लज्जत तो उन कतरनों की है, यार।' पवन हँसा।
'मैंने एक-दो बार कोशिश की पर सफल नहीं हुआ। रात भर लगता रहा जैसे पेट में मुर्गा बोल रहा है कुकडूँकूँ।'
'तुम्हीं जैसों से महात्मा गांधी आज भी साँसें ले रहे हैं। उनके पेट में बकरा में-में करता था।' शरद ने वेटर को बुला कर पूछा, 'कौन-सा पिजा ज्यादा बिकता है यहाँ।' 'जैन पिजा।' वेटर ने मुसकुराते हुए जवाब दिया।
'देख लिया,' शरद बोला, 'पवन, तुम इसको एप्रिशिएट करो कि सात समंदर पार की डिश का पहले हम भारतीयकरण करते हैं, फिर खाते हैं। घर में ममी बेसन का ऐसा लजीज आमलेट बना कर खिलाती हैं कि अंडा उसके आगे पानी भरे।'
'मैं तो जब से गुजरात आया हूँ बेसन ही खा रहा हूँ। पता है बेसन को यहाँ क्या बोलते हैं ? चने का लोट।'

पता नहीं यह जैन धर्म का प्रभाव था या गांधीवाद का, गुजरात में मांस, मछली और अंडे की दुकानें मुश्किल से देखने में आतीं। होस्टल में रहने के कारण पवन के लिए अंडा भोजन का पर्याय था पर यहाँ सिर्फ स्टेशन के आस-पास ही अंडा मिलता। वहीं तली हुई मछली की भी चुनी दुकानें थीं। पर अकसर मेम नगर से स्टेशन तक आने की और ट्रैफिक में फँसने की उसकी इच्छा न होती। तब वह किसी अच्छे रेस्तराँ में सामिष भोजन कर अपनी तलब पूरी करता।

वे अपने पुराने दिन याद करते रहे, दोनों के बीच में लड़कपन की बेशुमार बेवकूफियाँ कॉमन थीं और पढ़ाई के संघर्ष। पवन ने कहा, 'पहले दिन जब तुम अमदाबाद आए तब की बात बताना जरा।'
'तुम कभी अमदाबाद कहते हो कभी अहमदाबाद, यह चक्कर क्या है।'
'ऐसा है अपना गुजराती क्लायंट अहमदाबाद को अमदाबाद ही बोलना माँगता, तो अपुन भी ऐसाइच बोलने का।'
'मैं कहता हूँ यह एकदम व्यापारी शहर है, सौ प्रतिशत। मैं चालीस घंटे के सफर के बाद यहाँ उतरा। एक थ्री व्हीलरवाले से पूछा, 'आई.आई.एम. चलोगे ?' किदर बोलने से, उसने पूछा। मैंने कहा, 'भाई, वस्त्रापुर में जहाँ मैनेजरी की पढ़ाई होती है, उसी जगह जाना है।' तो जानते हो साला क्या बोला, टू हंड्रेड भाड़ा लगेगा। मैंने कहा, तुम्हारा दिमाग तो ठीक है। उसने कहा, साब आप उदर से पढ़ कर बीस हजार की नौकरी पाओगे, मेरे को टू हंड्रेड

देना आपको ज्यादा लगता क्या ?' 'तुम्हारा सिर घूम गया था?' 'बाई गॉड। मुझे लगा वह एकदम ठग्गू है। पर जिस भी थ्री व्हीलरवाले से मैंने बात की सबने यही रेट बताया।'

'मुझे याद है, शाम को तुमने मुझसे मिल कर सबसे पहले यही बात बताई थी।'
'सच्ची बात तो यह है कि अपने घर और शहर से बाहर आदमी हर रोज एक नया सबक सीखता है।' 'और बताओ, जॉब ठीक चल रहा है?' 'ठीक क्या यार, मैंने कंपनी ही गलत चुन ली।' 'बैनर तो बड़ा अच्छा है, स्टार्ट भी अच्छा दिया है?' 'पर प्रॉडक्ट भी देखो। बूट पॉलिश। हालत यह है कि हिंदुस्तान में सिर्फ दस प्रतिशत लोग चमड़े के जूते पहनते हैं।' 'बाकी नब्बे क्या नंगे पैर फिरते हैं?' 'मजाक नहीं, बाकी लोग चप्पल पहनते हैं या फोम शूज। फोम के जूते कपड़ों की तरह डिटरजेंट से धुल जाते हैं और चप्पल चटकानेवाले पॉलिश के बारे में कभी सोचते नहीं। पॉलिश बिके तो कैसे?'

पवन ने कौतुक से रेस्तराँ में कुछ पैरों की तरफ देखा। अधिकांश पैरों में फोम के मोटे जूते थे। कुछ पैरों में चप्पलें थीं। 'अभी हेड ऑफिस से फैक्स आया है कि माल की अगली खेप भिजवा रहे हैं। अभी पिछला माल बिका नहीं है। दुकानदार कहते हैं वे और ज्यादा माल स्टोर नहीं करेंगे, उनके यहाँ जगह की किल्लत है। ऐसे में मेरी सनशाइन शू पॉलिश क्या करें?' 'डीलर को कोई गिफ्ट ऑफर दो, तो वह माल निकाले।'
'सबको सनशाइन रखने के लिए वॉल रैक दिए हैं, डीलर्स कमीशन बढ़वाया है पर मैंने खुद खड़े हो कर देखा है, काउंटर सेल नहीं के बराबर है।'
पवन ने सुझाव दिया, 'कोई रणनीति सोचो। कोई इनामी योजना, हॉलिडे प्रोग्राम?'
'इनामी योजना का सुझाव भेजा है। हमारा टारगेट उपभोक्ता स्कूली विद्यार्थी हैं। उसकी दिलचस्पी टॉफी या पेन में हो सकती है, हॉलिडे प्रोग्राम में नहीं।'
'हाँ, यह अच्छी योजना है।' 'बाइ गॉड, अगर पब्लिक स्कूलों में चमड़े के जूते पहनने का नियम न होता तो सारी बूट पॉलिश कंपनियाँ बंद हो जातीं। इन्हीं के बूते पर बाटा, कीवी, बिल्ली, सनशाइन सब जिंदा हैं।' 'इस लिहाज से मेरी प्रॉडक्ट बढ़िया है। हर सीजन में हर तरह के आदमी को गैस सिलेंडर की जरूरत रहती है। लेकिन यार, जब थोक में प्रॉडक्ट निकालनी हो, यह भी भारी पड़ जाती है।' पवन उठ खड़ा हुआ, 'थोड़ी देर और बैठे तो यहाँ डिनर टाइम हो जाएगा। तुम कहाँ खाना खाते हो आजकल।'
'वहीं जहाँ तुमने बताया था, मौसी के। और तुम?' 'मैं भी मौसी के यहाँ खाता हूँ पर मैंने मौसी बदल ली है।'

'क्यों?'
'वह क्या है यार मौसी कढ़ी और करेले में भी गुड़ डाल देती थी और खाना परोसनेवाली उसकी बेटी कुछ ऐसी थी कि झेली नहीं जाती थी।'
'हमारीवाली मौसी तो बहुत सख्त मिजाज है, खाते वक्त आप वॉकमैन भी नहीं सुन सकते। बस खाओ और जाओ।'

'यार, कुछ भी कहो अपने शहर का खस्ता, समोसा बहुत याद आता है।'

शहर में जगह-जगह घरों में महिलाओं ने माहवारी हिसाब पर खाना खिलाने का प्रबंध कर रखा था। नौकरीपेशा छड़े (अविवाहित) युवक उनके घरों में जा कर खाना खा लेते। रोटी, सब्जी, दाल और चावल। न रायता न चटनी न सलाद। दर तीन सौ पचास रुपए महीना, एक वक्त। इन महिलाओं को मौसी कहा जाता। भले ही उनकी उम्र

पचीस हो या पचास। रात साढ़े नौ के बाद खाना नहीं मिलता। तब ये लड़के उडुपी भोजनालय में एक मसाला दोसा खा कर सो जाते। इतनी तकलीफ में भी इन युवकों को कोई शिकायत न होती। अपने उद्यम से रहने और जीने का संतोष सबके अंदर।

घर गृहस्थीवाले साथी पूछते, 'जिंदगी के इस ढंग से कष्ट नहीं होता?'
'होता है कभी-कभी।' अनुपम कहता, 'सन 84 से बाहर हूँ। पहले पढ़ने की खातिर, अब काम की।' कभी-कभी छुट्टी के दिन अनुपम लिट्टी-चोखा बनाता। बाकी लड़के उसे चिढ़ाते, 'तुम अनुपम नहीं, अनुपमा हो।' वह बेलन हाथ में नचाते हुए कहता, 'हम अपने लालू अंकल को लिखूँगा इधर में तुम सब बुतरू एक सीधे-सादे बिहारी को सताते हो।'

जब आप अपना शहर छोड़ देते हैं, अपनी शिकायतें भी वहीं छोड़ आते हैं। दूसरे शहर का हर मंजर पुरानी यादों को कुरेदता है। मन कहता है ऐसा क्यों है वैसा क्यों नहीं है? हर घर के आगे एक अदद टाटा सुमो खड़ी है। मारुति 800 क्यों नहीं? तर्क शक्ति से तय किया जा सकता है कि यह परिवार की जरूरत और आर्थिक हैसियत का परिचय पत्र है। पर यादें हैं कि लौट-लौट आती हैं सिविल लाइंस, एलगिन रोड और चैथम लाइंस की सड़कों पर जहाँ माचिस की डिबियों जैसी कारें और स्टियरिंग के पीछे बैठे नमकीन चेहरे तबियत तरोताजा कर जाते। ओफ, नए शहर में सब कुछ नया है। यहाँ दूध मिलता है पर भैसें नहीं दिखतीं। कहीं साइकिल की घंटी टनटनाते दूधवाले नजर नहीं आते। बड़ी-बड़ी सुसज्जित डेरी शॉप हैं, एयरकंडीशंड, जहाँ आदमकद चमचमाती स्टील की टंकियों में टोटी से दूध निकलता है। ठंडा, पास्चराइज्ड। वहीं मिलता है दही, दुग्ध, पेड़ा और श्रीखंड।

यही हॉल तरकारियों का है। हर कॉलोनी के गेट पर सुबह तीन-चार घंटे एक ऊँचा ठेला तरकारियों से सजा खड़ा रहेगा। वह घर-घर घूम कर आवाज नहीं लगाता। स्त्रियाँ उसके पास जाएँगी और खरीदारी करेंगी। उसके ठेले पर खास और आम तरकारियों का अंबार लगा है। हरी शिमला मिर्च है तो लाल और पीली भी। गोभी है तो ब्रोकोली भी। सलाद की शक्ल का थाई कैबेज भी दिखाई दे जाता है। खास तरकारियों में किसी की भी कीमत डेढ़ दो सौ रुपए किलो से कम नहीं। ये बड़े-बड़े लाल टमाटर एक तरफ रखे हैं कि दूर से देखने पर प्लास्टिक की गेंद लगते हैं। ये टमाटर क्यारी में नहीं, प्रयोगशाला में उगाए गए लगते हैं। कीमत दस रुपए पाव। टमाटर का आकार इतना बड़ा है कि एक पाव में एक ही चढ़ सकता है। दस रुपए का एक टमाटर है। भगवान, क्या टमाटर भी एन.आर.आई. हो गया। शिकागो में एक डॉलर का एक टमाटर मिलता है। भारत में टमाटर उसी दिशा में बढ़ रहा है। तरकारियाँ विश्व बाजार की जिंस बनती जा रही हैं। इनका भूमंडलीकरण हो रहा है। पवन को याद आता है उसके शहर में घूरे पर भी टमाटर उग जाता था। किसी ने पका टमाटर कूड़े-करकट के ढेर पर फेंक दिया, वहीं पौधा लहलहा उठा। दो माह बीतते न बीतते उसमें फल लग जाते। छोटे-छोटे लाल टमाटर, रस से टलमल, यहाँ जैसे बड़े बेजान और बनावटी नहीं, असल और खटमिट्ठे।

शहर के बाजारों में घूमना पवन, शरद, दीपेंद्र, रोजविंदर और शिल्पा का शौक भी है और दिनचर्या भी। रोजविंदर कौर प्रदूषण पर प्रोजेक्ट रिपोर्ट तैयार कर रही है। कंधे पर पर्स और कैमरा लटकाए कभी वह एलिस ब्रिज के ट्रैफिक जाम के चित्र उतारती है तो कभी बाजार में जनरेटर से निकलनेवाले धुएँ का जाएजा लेती है।
दीपेंद्र कहता है, 'रोजू तुम्हारी रिपोर्ट से क्या होगा। क्या टैंपो और जेनरेटर धुआँ छोड़ना बंद कर देंगे?'

रोजू सिगरेट का आखिरी कश ले कर उसका टोटा पैर के नीचे कुचलती है, 'माई फुट ! तुम तो मेरे जॉब को ही चुनौती दे रहे हो। मेरी कंपनी को इससे मतलब नहीं है कि वाहन धुएँ के बगैर चलें। उसकी योजना है हवा

शुद्धिकरण संयंत्र बनाने की। एक हर्बल स्प्रे भी बनानेवाली है। उसे एक बार नाक के पास स्प्रे कर लो तो धुएँ का प्रदूषण आपकी साँस के रास्ते अंदर नहीं जाता।'

'और जो प्रदूषण आँख और मुँह के रास्ते जाएगा वह?'

'तो मुँह बंद रखो और आँख में डालने को आइ ड्रॉप ले आओ।'
पवन के मुँह से निकल जाता है, 'मेरे शहर में प्रदूषण नहीं है।'

'आ हा हा, पूरे विश्व में प्रदूषण चिंता का विषय है और ये पवन कुमार आ रहे हैं सीधे स्वर्ग से कि वहाँ प्रदूषण नहीं हैं। तुम इलाहाबाद के बारे में रोमांटिक होना कब छोड़ोगे?'
रोजू हँसती है, 'वॉट ही मींस इज वहाँ प्रदूषण कम है। वैसे पवन मैंने सुना है यू.पी. में अभी भी किचन में लकड़ी के चूल्हे पर खाना बनता है। तब तो वहाँ घर के अंदर ही धुआँ भर जाता होगा?'

'इलाहाबाद गाँव नहीं शहर है, कावल टाउन। शिक्षा जगत में उसे पूर्व का ऑक्सफोर्ड कहते हैं।' शिल्पा काबरा बातचीत को विराम देती है, 'ठीक है, अपने शहर के बारे में थोड़ा रोमांटिक होने में क्या हर्ज है।'

पवन कृतज्ञता से शिल्पा को देखता है। उसे यह सोच कर बुरा लगता है कि शिल्पा की गैरमौजूदगी में वे सब उसके बारे में हल्केपन से बोलते हैं। पवन का ही दिया हुआ लतीफा है शिल्पा काबरा, शिल्पा का ब्रा।

'विश्वास नी जोत घरे-घरे गुर्जर गैस लावे छे' यह नारा है पवन की कंपनी का। इस संदेश को प्रचारित-प्रसारित करने का अनुबंध शीबा कंपनी को साठ लाख में मिला है। उसने भी सड़कें और चौराहे रँग डाले हैं।

अटैची में कपड़े, आँखों में सपने और अंतर में आकुलता लिए न जाने कहाँ-कहाँ से नौजवान लड़के नौकरी की खातिर इस शहर में आ पहुँचे हैं। बड़ी-बड़ी सर्विस इंडस्ट्री में कार्यरत ये नवयुवक सबेरे नौ से रात नौ तक अथक परिश्रम करते हैं। एक दफ्तर के दो-तीन लड़के मिल कर तीन या चार हजार तक के किराए का एक फ्लैट ले लेते हैं। सभी बराबर का शेयर करते हैं किराया, दूध का बिल, टायलेट का सामान, लांड्री का खर्च। इस अनजान शहर में रम जाना उनके आगे नौकरी में जम जाने जैसी ही चुनौती है, हर स्तर पर। कहाँ अपने घर में ये लड़के शहजादों की तरह रहते थे, कहाँ सारी सुख-सुविधाओं से वंचित, घर से इतनी दूर ये सब सफलता के संघर्ष में लगे हैं। न इन्हें भोजन की चिंता है न आराम की। एक आँख कंप्यूटर पर गड़ाए ये भोजन की रस्म अदा कर लेते हैं और फिर लग जाते हैं कंपनी के व्यापार लक्ष्य को सिद्ध करने में। जाहिर है, व्यापार या लाभ लक्ष्य इतने ऊँचे होते हैं कि सिद्धि का सुख हर एक को हासिल नहीं होता। सिद्धि, इस दुनिया में, एक चार पहिया दौड़ है जिसमें स्टियरिंग आपके हाथ में है पर बाकी सारे कंट्रोल कंपनी के हाथ में। वही तय करती है आपको किस रफ्तार से दौड़ना है और कब तक।एल.पी.जी. विभाग में काम करने वालों के हौसले और हसरतें बुलंद हैं। सबको यकीन है कि वे जल्द ही आई॰ओ.सी. को गुजरात से खदेड़ देंगे। निदेशक से ले कर डिलीवरी मैन तक में काम के प्रति तत्परता और तन्मयता है। मेन नगर में जहाँ जी.जी.सी.एल. का दफ्तर है, वह एक खूबसूरत इमारत है, तीन तरफ हरियाली से घिरी। सामने कुछ और खूबसूरत मकान हैं जिनके बरामदों में विशाल झूले लगे हैं। बगल में सेंट जेवियर्स स्कूल है। छुट्टी की घंटी पर जब नीले यूनीफार्म पहने छोटे-छोटे बच्चे स्कूल के फाटक से बाहर भीड़ लगाते हैं तो जी.जी.सी.एल. के लाल सिलिंडरों से भरे लाल वाहन बड़ा बढ़िया कांट्रास्ट बनाते हैं लाल नीला, नीला लाल।

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक के तीन जादुई अक्षरों ने बहुत-से नौजवानों के जीवन और सोच की दिशा ही बदल डाली थी। ये तीन अक्षर थे एम.बी.ए.। नौकरियों में आरक्षण की आँधी से सकपकाए सवर्ण परिवार धड़ाधड़ अपने बेटे बेटियों को एम.बी.ए. में दाखिल होने की सलाह दे रहे थे। जो बच्चा पवन, शिल्पा और रोजविंदर की तरह कैट, मैट जैसी प्रवेश परीक्षाएँ निकाल ले वह तो ठीक, जो न निकाल पाए उसके लिए लंबी-चौड़ी कैपिटेशन फीस देने पर एम.एम.एस. के द्वार खुले थे। हर बड़ी संस्था ने ये दो तरह के कोर्स बना दिए थे। एक के जरिए वह प्रतिष्ठा अर्जित करती थी तो दूसरी के जरिए धन। समाज की तरह शिक्षा में भी वर्गीकरण आता जा रहा था। एम.बी.ए. में लड़के वर्ष भर पढ़ते, प्रोजेक्ट बनाते, रिपोर्ट पेश करते और हर सत्र की परीक्षा में उत्तीर्ण होने की जी तोड़ मेहनत करते। एम.एम.एस. में रईस उद्योगपतियों, सेठों के बिगड़े शाहजादे एन.आर.आई. कोटे से प्रवेश लेते, जम कर वक्त बरबाद करते और दो की जगह तीन साल में डिग्री ले कर अपने पिता का व्यवसाय सँभालने या बिगाड़ने वापस चले जाते।

शरद के पिता इलाहाबाद के नामी चिकित्सक थे। संतान को एम.बी.बी.एस. में दाखिल करवाने की उनकी कोशिशें नाकामयाब रहीं तो उन्होंने एकमुश्त कैपिटेशन फीस दे कर उसका नाम एम.एम.एस. में लिखवा दिया।
एम.एम.एस. डिग्री के बाद उन्होंने अपने रसूख से उसे सनशाइन बूट पॉलिश में नौकरी भी दिलवा दी पर इसमें सफल होना शरद की जिम्मेदारी थी। उसे अपने पिता का कठोर चेहरा याद आता और वह सोच लेता नौकरी में चाहे कितनी फजीहत हो वह सह लेगा पर पिता की हिकारत वह नहीं सह सकेगा। कंपनी के एम.डी. जब-तब हेड ऑफिस से आ कर चक्कर काट जाते। वे अपने मैनेजरों को भेज कर जायजा लेते और शरद व उसके साथियों पर बरस पड़ते, 'पूरे मार्केट में बिल्ली छाई हुई है। शो रूम्स से ले कर होर्डिंग और बैनर तक, सब जगह बिल्ली ही बिल्ली है। आप लोग क्या कर रहे हैं। अगर स्टोरेज की किल्लत है तो बिल्ली के लिए क्यों नहीं, सनशाइन ही क्यों?' शरद और साथी अपने पुराने तर्क प्रस्तुत करते तो एम.डी. ताम्रपर्णी साहब और भड़क जाते, 'बिल्ली पालिश क्या फोम शूज पर लगाई जा रही है या उससे चप्पलें चमकाई जा रही हैं?'

इस बार उन्होंने शरद और उसके साथियों को निर्देश दिया कि नगर के मोचियों से बात कर रिपोर्ट दें कि वे कौन-सी पॉलिश इस्तेमाल करते हैं और क्यों?
एम.डी. तो फूँ-फाँ कर चलते बने, लड़कों को मोचियों से सिर खपाने के लिए छोड़ गए। शरद और उसके सहकर्मी सुबह नौ से बारह के समय शहर के मोचियों को ढूँढ़ते, उनसे बात करते और नोट्स लेते। दरअसल बाजार में दिन पर दिन स्पर्धा कड़ी होती जा रही थी। उत्पादन, विपणन और विक्रय के बीच तालमेल बैठाना दुष्कर कार्य था। एक-एक उत्पाद की टक्कर में बीस-बीस वैकल्पिक उत्पाद थे। इन सबको श्रेष्ठ बताते विज्ञापन अभियान थे जिनके प्रचार-प्रसार से मार्केटिंग का काम आसान क बजाय मुश्किल होता जाता। उपभोक्ता के पास एक-एक चीज के कई चमकदार विकल्प थे।

रोजविंदर ने पुरानी कंपनी छोड़ कर इंडिया लीवर के टूथपेस्ट डिवीजन में काम सँभाला था। उसे आजकल दुनिया में दाँत के सिवा कुछ नजर नहीं आता था। वह कहती, 'हमारी प्रोडक्ट के एक-एक आइटम को इतना प्रचारित कर दिया गया है कि अब इसमें बस साबुन मिलाने की कसर बाकी है।' रेडियो और टी.वी. पर दिन में सौ बार दर्शक और श्रोता की चेतना को झकझोरता विज्ञापन मार्केटिंग के प्रयासों में चुनौती और चेतावनी का काम करता। उपभोक्ता बहुत ज्यादा उम्मीद के साथ टूथपेस्ट खरीदता जो एकबारगी पूरी न होती दिखती। वह वापस अपने

पुराने टूथपेस्ट पर आ जाता बिना यह सोचे कि उसे अपने दाँतों की बनावट, खान-पान के प्रकार और प्रकृति और वंशानुगत सीमाओं पर भी गौर करना चाहिए।

शरद को लगता बूट पालिश बेचना सबसे मुश्किल काम है तो रोजविंदर को लगता ग्राहकों के मुँह नया टूथपेस्ट चढ़वाना चुनौतीपरक है और पवन पांडे को लगता वह अपनी कंपनी का टारगेट, विक्रय लक्ष्य, कैसे पूरा करे। खाली समय में अपने-अपने उत्पाद पर बहस करते-करते वे इतना उत्पात करते कि लगता सफलता का कोई सट्टा खेल रहे हैं। पवन म्यूजिक सिस्टम पर गाना लगा देता, 'ये तेरी नजरें झुकी-झुकी, ये तेरा चेहरा खिला-खिला। बड़ी किस्मतवाला है...' — 'सनी टूथपेस्ट जिसे मिला' रोजविंदर गाने की लाइन पूरी करती।

ऐनाग्राम फाइनेंस कंपनी के सौजन्य से शहर में तीन दिवसीय सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन हुआ। गुजरात विश्वविद्यालय के विशाल परिसर में बेहद सुंदर साज-सज्जा की गई। गुजरात वैसे भी पंडाल रचना में परंपरा और मौलिकता के लिए विख्यात रहा है, फिर इस आयोजन में बजट की कोई सीमा न थी। पवन, शिल्पा, रोजू, शरद और अनुपम ने पहले ही अपने पास मँगवा लिए। पहले दिन नृत्य का कार्यक्रम था, अगले दिन ताल-वाद्य और पंडित भीमसेन जोशी का गायन, हरिप्रसाद चौरसिया का बाँसुरी वादन और शिवकुमार शर्मा का संतूर वादन। अहमदाबाद जैसी औद्योगिक, व्यापारिक नगरी के लिए यह एक अभूतपूर्व संस्कृति संगम था।

आयोजन का समस्त प्रबंध ए.एफ.सी. के युवा मैनेजरों के जिम्मे था। मुक्तांगन में पंद्रह हजार दर्शकों के बैठने का इंतजाम था। परिसर के चार कोनों तथा बीच-बीच में दो जगह विशाल सुपर स्क्रीन लगे थे जिन पर मंच के कलाकारों की छवि पड़ रही थी। इससे मंच से दूर बैठे दर्शकों को भी कलाकार के समीप होने की अनुभूति हो रही थी। दर्शकों की सीटों से हट कर, परिसर की बाहरी दीवार के करीब एक स्नैक बाजार लगाया गया था। सांस्कृतिक कार्यक्रम में प्रवेश निःशुल्क था, हालाँकि खान-पान के लिए सबके लिए पचास रुपए प्रति व्यक्ति के हिसाब से कूपन खरीदना अनिवार्य था।

दूसरे दिन पवन भीमसेन जोशी को सुनने गया था। सुपर स्क्रीन पर भीमसेन जोशी महा भीमसेन जोशी नजर आ रहे थे। 'सब है तेरा' अंतरे पर आते-आते उन्होंने हमेशा की तरह सुर और लय का समा बाँध दिया। लेकिन पवन को इस बात से उलझन हो रही थी कि आसपास की सीटों के दर्शकों की दिलचस्पी गायन से अधिक खान-पान में थी। वे बार-बार उठ कर स्नैक बाजार जाते, वहाँ से अंकल चिप्स के पैकेट और पेप्सी लाते। देखते ही देखते पूरे माहौल में राग अहीर भैरव के साथ कुर्र-कुर्र चुर्र-चुर्र की ध्वनियाँ भी शामिल हो गईं। अधिकांश दर्शकों के लिए वहाँ देखे जाने के अंदाज में उपस्थिति महत्वपूर्ण थी।

पवन ने अपने शहर में इस कलाकार को सुना था। मेहता संगीत समिति के हॉल में खचाखच भीड़ में स्तब्ध सराहना में सम्मोहित | इलाहाबाद में आज भी साहित्य संगीत के सर्वाधिक मर्मज्ञ और रसज्ञ नजर आते हैं। वहाँ इस तरह बीच में उठ कर खाने-पीने का कोई सोच भी नहीं सकता।

अपने शहर के साथ ही घर की याद उमड़ आई। उसने सोचा प्रोग्राम खत्म होने पर वह घर फोन करेगा। माँ इस वक्त क्या कर रही होंगी, शायद दही में जामन लगा रही होंगी — दिन का आखिरी काम। पापा क्या कर रहे होंगे, शायद समाचारों की पचासवीं किस्त सुन रहे होंगे। भाई क्या कर रहा होगा। वह जरूर टेलीफोन से चिपका होगा। उसके कारण फोन इतना व्यस्त रहता है कि खुद पवन को अपने घर बात करने के लिए भी पी.सी.ओ पर एक-एक

घंटे बैठना पड़ जाता है। अंततः जब फोन मिलता है सघन से पता चलता है कि माँ पापा की अभी-अभी आँख लगी है। कभी उनसे बात होती है, कभी नहीं होती। जब माँ निंदासे स्वर में पूछती हैं, 'कैसे हो पुन्नू, खाना खा लिया, चिट्ठी डाला करो।' वह हर बात पर हाँ-हाँ कर देता है। पर तसल्ली नहीं होती। उसका अपनी माँ से बेहद जीवंत रिश्ता रहा है। फोन जैसे यंत्र को बीच में डाल कर, सिर्फ उस तक पहुँचा जा सकता है, उसे पुनर्सृजित नहीं किया जा सकता। वह माँ के चेहरे की एक-एक जुंबिश देखना चाहता है। पिता हँसते हुए अद्भुत सुंदर लगते हैं। इतनी दूर बैठ कर पवन को लगता है माता, पिता और भाई उसके अलबम की सबसे सुंदर तस्वीरें हैं। उसे लगा अब सघन किस से उलझता होगा। सारा दिन उस पर लदा रहता था, कभी तकरार में कभी लाड़ में। कई बार सघन अपना छुटपन छोड़ कर बड़ा भइया बन जाता। पवन किसी बात से खिन्न होता तो सघन उससे लिपट-लिपट कर मनाता, 'भइया, बताओ क्या खाओगे? भइया, तुम्हारी शर्ट आयरन कर दें? भइया, हमें सिबिल लाइंस ले चलोगे?'

साहित्य प्रेमी माता-पिता के कारण घर में कमरे किताबों से अटे पड़े थे। स्कूल की पढ़ाई में बाहरी सामान्य किताबें पढ़ने का अवकाश नहीं मिलता था, फिर भी जो थोड़ा-बहुत वह पढ़ जाता था, अपने पापा और माँ के उकसाने के कारण। उन्होंने उसे प्रेमचंद की कहानियाँ और कुछ लेख पढ़ने को दिए थे। 'कफन', 'पूस की रात' जैसी कहानियाँ उसके जेहन पर नक्श हो गई थीं लेकिन लेखों के संदर्भ सब गड्ड-मड्ड हो गए थे।

अध्ययन के लिए अब अवकाश भी नहीं था। कंपनी की कर्मभूमि ने उसे इस युग का अभिमन्यु बना दिया था। घर की बहुत हुड़क उठने पर फोन पर बात करता। एक आँख बार-बार मीटर स्क्रीन पर उठ जाती। छोटू कोई चुटकुला सुना कर हँसता। पवन भी हँसता, फिर कहता, 'अच्छ छोटू, अब काम की बात कर, चालीस रुपए का हँस लिए हम लोग।' माँ पूछती, 'तुमने गद्दा बनवा लिया?' वह कहता, 'हाँ माँ, बनवा लिया।' सच्चाई यह थी कि गद्दा बनवाने की फुर्सत ही उसके पास नहीं थी। घर से फोम की रजाई लाया था, उसी को बिस्तर पर गद्दे की तरह बिछा रखा था। पर उसे पता था कि 'नहीं' कहने पर माँ नसीहतों के ढेर लगा देंगी, 'गद्दे के बगैर कमर अकड़ जाएगी। मैं यहाँ से बनवा कर भेजूँ? अपना ध्यान भी नहीं रख पाता, ऐसी नौकरी किस काम की। पब्लिक सेक्टर में आ जा, चैन से तो रहेगा।'

अहमदाबाद इलाहाबाद के बीच एस.टी.डी. कॉल की पल्स रेट दिल की धड़कन जैसी सरपट चलती है - 3-6-9-12। पाँच मिनट बात कर अभी मन भी नहीं भरा होता कि सौ रुपए निकल जाते। तब उसे लगता 'टाइम इज मनी'। वह अपने को धिक्कारता कि घरवालों से बात करने में भी वह महाजनी दिखा रहा है पर शहर में अन्य मर्दों पर इतना खर्च हो जाता कि फोन के लिए पाँच सौ से ज्यादा गुंजाइश बजट में न रख पाता।

शनि की शाम पवन हमेशा की तरह अभिषेक शुक्ला के यहाँ पहुँचा तो पाया वहाँ माहौल अलग है। प्रायः यह होता कि वह, अभिषेक, उसकी पत्नी राजुल और उनके नन्हे बेटे अंकुर के साथ कहीं घूमने निकल जाता। लौटते हुए वे बाहर ही डिनर ले लेते या कहीं से बढ़िया सब्जी पैक करा कर ले आते और ब्रेड से खाते। आज अंकुर जिद पकड़े था कि पार्क में नहीं जाएँगे, बाजार जाएँगे। राजुल उसे मना रही थी, 'अंकुर पार्क में तुम्हें भालू दिखाएँगे और खरगोश भी।'

'वो सब हमने देख लिया, हम बजाल देखेंगे।'

हार कर वे बाजार चल दिए। खिलौनों की दुकान पर अंकुर अड़ गया। कभी वह एयरगन हाथ में लेता कभी ट्रेन। उसके लिए तय करना मुश्किल था कि वह क्या ले। पवन ने इलेक्ट्रानिक बंदर उसे दिखाया जो तीन बार कूदता और खों-खों करता था।

अंकुर पहले तो चुप रहा। जैसे ही वे लोग दाम चुका कर बंदर पैक करा कर चलने लगे, अंकुर मचलने लगा, 'बंदर नहीं गन लेनी है।' राहुल ने कहा, 'गन गंदी, बंदर अच्छा। राजा बेटा बंदर से खेलेगा।' 'हम ठाँय-ठाँय करेंगे हम बंदर फेंक देंगे।'

फिर से दुकान पर जा कर खिलौने देखे गए। बेमन से एयरगन फिर निकलवाई। अभी उसे देख, समझ रहे थे कि अंकुर का ध्यान फिर भटक गया। उसने दुकान पर रखी साइकिल देख ली। 'छिकिल लेना, छिकिल लेना।' वह चिल्लाने लगा।

'अभी तुम छोटे हो। ट्राइसिकिल घर में है तो।' राजुल ने समझाया।

अभिषेक की सहनशक्ति खत्म हो रही थी, 'इसके साथ बाजार आना मुसीबत है, हर बार किसी बड़ी चीज के पीछे लग जाएगा। घर में खिलौने रखने की जगह भी नहीं है और ये खरीदता चला जाता है।'

बड़े कौशल से अंकुर का ध्यान वापस बंदर में लगाया गया। दुकानदार भी अब तक उकता चुका था। इस सब चक्कर में इतनी देर हो गई कि और कहीं जाने का वक्त ही नहीं बचा। वापसी में वे लॉ गार्डन से सटे मार्केट में भेलपुरी, पानीपूरी खाने रुक गए। मार्केट ग्राहकों से ठसाठस भरा था। अंकुर ने कुछ नहीं खाया, उसे नींद आने लगी। किसी तरह उसे कार में लिटा कर वे घर आए।

अभिषेक ने कहा, 'पवन तुम लकी हो, अभी तुम्हारी जान को न बीवी का झंझट है न बच्चे का।' राजुल तुनक गई, 'मेरा क्या झंझट है तुम्हें?' 'मैं तो जनरल बात कर रहा था।' 'यह जनरल नहीं स्पेशल बात थी। मैंने तुम्हें पहले कहा था मैं अभी बच्चा नहीं चाहती। तुमको ही बच्चे की पड़ी थी।' पवन ने दोनों को समझाया, 'इसमें झगड़ेवाली कोई बात नहीं है। एक बच्चा तो घर में होना ही चाहिए। एक से कम तो पैदा भी नहीं होता, इसलिए एक तो होगा ही होगा।' अभिषेक ने कहा, 'मैं बहुत थका हुआ हूँ। नो मोर डिस्कशन।'

लेकिन राजुल का मूड खराब हो गया। वह घर के आखिरी काम निपटाते हुए भुनभुनाती रही, 'हिंदुस्तानी मर्द को शादी के सारे सुख चाहिए, बस जिम्मेदारी नहीं चाहिए। मेरा कितना हर्ज हुआ। अच्छी-भली सर्विस छोड़नी पड़ी। मेरी सब कलीग्स कहती थीं राजुल अपनी आजादी चौपट करोगी और कुछ नहीं। आजकल तो ड्रिंक्स का जमाना है। डबल इनकम नो किड्स (दोहरी आमदनी, बच्चे नहीं)। सेंटिमेंट के चक्कर में फँस गई।' किसी तरह विदा ले कर पवन वहाँ से निकला।

कंपनी ने पवन और अनुपम का तबादला राजकोट कर दिया। वहाँ उन्हें नए सिरे से ऑफिस शुरू करना था, एल.पी.जी. का रिटेल मार्केट सँभालना था और पूरे सौराष्ट्र में जी.जी.सी. संजाल फैलाने की संभावनाओं पर प्रोजेक्ट तैयार करना था।

तबादले अपने साथ तकलीफ भी लाते हैं पर इन दोनों को उतनी नहीं हुई जितनी आशंका थी। इनके लिए अहमदाबाद भी अनजाना था और राजकोट भी। परदेसी के लिए परदेस में पसंद क्या, नापसंद क्या। अहमदाबाद में इतनी जड़ें जमी भी नहीं थीं कि उखड़े जाने पर दर्द हो। पर अहमदाबाद राजकोट मार्ग पर डीलक्स बस में जाते समय दोनों को यह जरूरी लग रहा था कि वे हेड ऑफिस से ब्रांच ऑफिस की ओर धकेल दिए हैं।

गुर्जर गैस सौराष्ट्र के गाँवों में अपने पाँव पसार रही थी। इसके लिए वह अपने नए प्रशिक्षार्थियों को दौरे और प्रचार का व्यापक कार्यक्रम समझा चुकी थी। सूचना, उर्जा, वित्त और विपणन के लिए अलग-अलग टीम ग्राम स्तर पर कार्य करने निकल पड़ी थी। यों तो पवन और अनुपम भी अभी नए ही थे पर उन्हें इन छब्बीस प्रशिक्षार्थियों के कार्य का आकलन और संयोजन करना था। राजकोट में वे एक दिन टिकते कि अगले ही दिन उन्हें सूरत, भरूच, अंकलेश्वर के दौरे पर भेज दिया जाता। हर जगह किसी तीन सितारा होटल में इन्हें टिकाया जाता, फिर अगला मुकाम।

सूरत के पास हजीरा में भी पवन और अनुपम गए। वहाँ कंपनी के तेल के कुएँ थे। लेकिन पहली अनुभूति कंपनी के वर्चस्व की नहीं, अरब महासागर के वर्चस्व की हुई। एक तरफ हरे-भरे पेड़ों के बीच स्थित बड़ी-बड़ी फैक्टरियाँ, दूसरी तरफ हहराता अरब सागर।

एक दिन उन्हें वीरपुर भी भेजा गया। राजकोट से पचास मील पर इस छोटे-से कस्बे में जलराम बाबा का शक्तिपीठ था। वहाँ के पुजारी को पवन ने गुर्जर गैस का महत्व समझा कर छह गैस कनेक्शन का ऑर्डर लिया। कुछ ही देर में जलराम बाबा के भक्तों और समर्थकों में खबर फैल गई कि बाबा ने गुर्जर गैस वापरने (इस्तेमाल करने) का आदेश दिया है। देखते-देखते शाम तक पवन ओर अनुपम ने दो सौ चौंसठ गैस कनेक्शन का आदेश प्राप्त कर लिया। वैसे गुर्जर गैस का मुकाबला हर जगह आई.ओ.सी. से था। लोग औद्योगिक और घरेलू इस्तेमाल के अंतर को महत्व नहीं देते। जिसमें चार पैसे बचें वहीं उन्हें बेहतर लगता। कई जगह उन्हें पुलिस की मदद लेनी पड़ी कि घरेलू गैस का इस्तेमाल औद्योगिक इकाइयों में न किया जाए।

किरीट देसाई ने चार दिन की छुट्टी माँगी तो पवन का माथा ठनक गया। निजी उद्यम में दो घंटे की छुट्टी लेना भी फिजूलखर्ची समझा जाता था फिर यह तो इकट्ठे चार दिन का मसला था। किरीट की गैरहाजिरी का मतलब था एक ग्रामीण क्षेत्र से चार दिनों के लिए बिल्कुल कट जाना। 'आखिर तुम्हें ऐसा क्या काम आ पड़ा?' 'अगर मैं बताऊँगा तो आप छुट्टी नहीं देंगे।' 'क्या तुम शादी करने जा रहे हो?'
'नहीं सर। मैंने आपको बोला न मेरे को जरूर जाना माँगता।'

बहुत कुरेदने पर पता चला किरीट देसाई सरल मार्ग के कैंप में जाना चाहता है। राजकोट में ही तेरह मील दूर पर उसके स्वामी जी का कैंप लगेगा।
'जो काम तुम्हारे माँ-बाप के लायक है वह तुम अभी से करोगे।' पवन ने कहा।
'नहीं सर, आप एक दिन कैंप के मेडिटेशन में भाग लीजिए। मन को बहुत शांति मिलती है। स्वामी जी कहते हैं, मेडिटेशन प्रिपेर्स यू फॉर योर मंडेज।' (ध्यान लगाने से आप अपने सोमवारों का सामना बेहतर ढंग से कर सकते हैं।)
'तो इसके लिए छुट्टी की क्या जरूरत है। तुम काम से लौट कर भी कैंप में जा सकते हो।'
'नहीं सर। पूजा और ध्यान फुलटाइम काम है।'

पवन ने बेमन से किरीट को छुट्टी दे दी। मन ही मन वह भुनभुनाता रहा। एक शाम वह यों ही कैंप की तरफ चल पड़ा। दिमाग में कहीं यह भी था कि किरीट की मौजूदगी जाँच ली जाए।

राजकोट जूनागढ़ लिंक रोड पर दाहिने हाथ को विशाल फाटक पर 'ध्यान शिविर सरल मार्ग' का बोर्ड लगा था। तकरीबन स्वतंत्र नगर वसा था। कारों का काफिला आ और जा रहा था। इतनी भीड़ थी कि उसमें किरीट को ढूँढ़ना मुमकिन ही नहीं था। जिज्ञासावश पवन अंदर घुसा। विशाल परिसर में एक तरफ बड़ी-सी खुली जगह वाहन खड़े करने के लिए छोड़ी गई थी जो तीन-चौथाई भरी हुई थी। वहीं आगे की ओर लाल- पीले रंग का पंडाल था। दूसरी तरफ तरतीब से तंबू लगे हुए थे। कुछ तंबुओं के बाहर कपड़े सूख रहे थे। उस भाग में भी एक फाटक था जिस पर लिखा था - प्रवेश निषेध।

पंडाल के अंदर जब पवन घुसने में सफल हुआ तब स्वामी जी का प्रवचन समापन की प्रक्रिया में था। वे निहायत शांत, संयत, गहन गंभीर वाणी में कह रहे थे, 'प्रेम करो, प्राणिमात्र से प्रेम करो। प्रेम कोई टेलीफोन कनेक्शन नहीं है जो आप सिर्फ एक मनुष्य से बात करें। प्रेम वह आलोक है जो समूचे कमरे को, समूचे जीवन को आलोकित करता है। अब हम ध्यान करेंगे। ओम्।'
उनके 'ओम्' कहते ही पाँच हजार श्रोताओं से भरे पंडाल में सन्नाटा खिंच गया। जो जहाँ जैसा बैठा था वैसा ही आँख मूँद कर ध्यानमग्न हो गया।

आँखें बंद कर पाँच मिनट बैठने पर पवन को भी असीम शांति का अनुभव हुआ। कुछ-कुछ वैसा जब वह लड़कपन में बहुत भाग-दौड़ कर लेता था तो माँ उसे जबरदस्ती अपने साथ लिटा लेती और थपकते हुए डपटती, 'बच्चा है कि आफत। चुपचाप आँख बंद कर, और सो जा।' उसे लगा अगर कुछ देर और वह ऐसे बैठ गया तो वाकई सो जाएगा।

उसने हल्के से आँख खोल कर अगल-बगल देखा, सब ध्यानमग्न थे। देखने से सभी वी.आई.पी. किस्म के भक्त थे, जेब में झाँकता मोबाइल फोन और घुटनों के बीच दबी मिनरल वाटर की बोतल उन्हें एक अलग दर्जा दे रही थी। सफलता के कीर्तिमान तलाशते ये भक्त जाने किस जेट रफ्तार से दिन भर दौड़ते थे, अपनी बिजनेस या नौकरी की लक्ष्य पूर्ति के कलपुर्जे बने मनुष्य। पर यहाँ इस वक्त ये शांति के शरणागत थे।

कुछ देर बाद सभा विसर्जित हुई। सबने स्वामी जी को मौन नमन किया और अपने वाहन की दिशा में चल दिए। पार्किंग स्थल पर गाड़ियों की घरघराहट और तीखे मीठे हार्न सुनाई देने लगे। वापसी में पवन का किरीट के प्रति आक्रोश शांत हो चुका था। उसे अपना स्नायुमंडल शांत और स्वस्थ लग रहा था। उसे यह उचित लगा कि आपाधापी से भरे जीवन में चार दिन का समय ध्यान के लिए निकाला जाए। स्वामी जी के विचार भी उसे मौलिकता और ताजगी से भरे लगे। जहाँ अधिसंख्य गुरुजन धर्म को महिमा मंडित करते हैं, किरीट के स्वामी जी केवल अध्यात्म पर बल देते रहे। चिंतन, मनन और आत्मशुद्धि उनके सरल मार्ग के सिद्धांत थे।

सरल मार्ग मिशन के भक्त उन भक्तों से नितांत भिन्न थे जो उसने अपने शहर में साल दर साल माघ मेले में आते देखे थे। दीनता की प्रतिमूर्ति बने वे भक्त असाध्य कष्ट झेल कर प्रयाग के संगम तट तक पहुँचते। निजी संपदा के नाम पर उनके पास एक अदद मैली कुचैली गठरी होती, साथ में बूढ़ी माँ या आजी और अंटी में गठियाए दस-बीस रुपए। कुंभ के पर्व पर लाखों की संख्या में ये भक्त गंगा मैया तक पहुँचते, डुबकी लगाते और मुक्ति की कामना के साथ घर वापस लौट जाते। संज्ञा की बजाय सर्वनाम वन कर जीते वे भक्त बस इतना समझते कि गंगा पवित्र पावन है और उनके कृत्यों की तारिणी। इससे ऊपर तर्कशक्ति विकसित करना उनका अभीष्ट नहीं था।

पर किरीट के स्वामी कृष्णा स्वामी जी महाराज के भक्त समुदाय में एक से एक सुशिक्षित, उच्च पदस्थ अधिकारी और व्यवसायी थे। कोई डॉक्टर था तो कोई इंजीनियर, कोई बैंक अफसर तो कोई प्राइवेट सेक्टर का मैनेजर। यहाँ तक कि कई चोटी के कलाकार भी उनके भक्तों में शुमार थे। साल में चार बार वे अपना शिविर लगाते, देश के अलग-अलग नगरों में। समूचे देश से उनके भक्त गण वहाँ पहुँचते। उनके कुछ विदेशी भक्त भी थे जो भारतीयों से ज्यादा स्वदेशी बनने और दिखने की कोशिश करते।

पवन ने दो-चार बार स्वामी जी का प्रवचन सुना। स्वामी जी की वक्तृता असरदार थी और व्यक्तित्व परम आकर्षक। वे दक्षिण भारतीय तहमद के ऊपर भारतीय कुर्ता धारण करते। अन्य धर्माचार्यों की तरह न उन्होंने केश बढ़ा रखे थे, न दाढ़ी। वे मानते थे कि मनुष्य को अपना बाह्य स्वरूप भी अंतर्स्वरूप की तरह स्वच्छ रखना चाहिए। उनका यथार्थवादी जीवन दर्शन उनके भक्तों को बहुत सही लगता। वे सब भी अपने यथार्थ को त्याग कर नहीं, उसमें से चार दिन की मोहलत निकाल कर इस आध्यात्मिक हॉलिडे के लिए आते। वे इसे एक 'अनुभव' मानते। स्वामी जी एकदम धारदार, विश्वसनीय अंग्रेजी में भारतीय मनीषा की शक्ति और सामर्थ्य समझाते, भक्तों का सिर देशप्रेम से उन्नत हो जाता। स्वामी जी हिंदी भी बखूबी बोल लेते। महिला शिविर में वे अपना आधा वक्तव्य हिंदी में देते और आधा अंग्रेजी में।

सरल मार्ग मिशन आराम करने से पूर्व स्वामी जी पी.पी. के. कंपनी में कार्मिक प्रबंधक थे। मिशन की संरचना, संचालन और कार्य योजना में उनका प्रबंधकीय कौशल देखने को मिलता था। शिविर में इतनी भीड़ एकत्र होती थी पर न कहीं अराजकता होती न शांति भंग। अनजाने में पवन उनसे प्रभावित होता जा रहा था। पर किसी भी प्रभाव की आत्यंतिकता उस पर ठहर नहीं पाती क्योंकि काम के सिलसिले में उसे राजकोट के आसपास के क्षेत्र के अलावा बार-बार अहमदाबाद भी जाना पड़ता। अहमदाबाद में दोस्तों से मिलना भी भला लगता। अभिषेक के यहाँ जा कर अंकुर की नई शरारतें देखना सुख देता।

अभिषेक ने विजुअलाइजर से आइडिया समझा। स्क्रिप्ट लिखी गई। अब विज्ञापन फिल्म बननी थी। उन्हें ऐसी मॉडल की तलाश थी जिसके व्यक्तित्व में दाँत प्रधान हों, साथ ही वह खूबसूरत भी हो। इसके अलावा दो-एक पंक्ति के डायलाग बोलने का उसे शऊर हो। उनके पास मॉडल्स की एक स्थायी सूची थी पर इस वक्त वह काम नहीं आ रही थी। मुश्किल यह थी किसी भी उत्पाद का प्रचार करने में एक मॉडल का चेहरा दिन में इतनी बार मीडिया संजाल पर दिखाया जाता कि वह उसी उत्पाद के विज्ञापन से चिपक कर रह जाता। अगले किसी उत्पाद के विज्ञापन में उस मॉडल को लेने से विज्ञापन ही पिट जाता। नए चेहरों की भी कमी नहीं थी। रोज ही इस क्षेत्र में नई लड़कियाँ जोखम उठाने को तैयार थीं पर उन्हें मॉडल बनाए जाने का भी एक तंत्र था। अगर सब कुछ तय होने के बाद कैमरामैन उसे नापास कर दे तब उसे लेना मुश्किल था।अभिषेक जिस विज्ञापन कंपनी में काम करता था उसमें आजकल एक अन्य कंपनी की टक्कर में टूथपेस्ट युद्ध छिड़ा हुआ था। दोनों के विज्ञापन एक के बाद एक टी.वी. के चैनलों पर दिखाए जाते। एक में डेंटिस्ट का बयान प्रमाण की तरह दिया जाता तो दूसरे में उसी बयान का खंडन। दोनों टूथपेस्ट बहुराष्ट्रीय कंपनियों के थे। इन कंपनियों का जितना धन टूथपेस्ट के निर्माण में लग रहा था लगभग उतना ही उसके प्रचार में। टूथपेस्ट तकरीबन एक-से थे, दोनों की रंगत भी एक थी पर कंपनी भिन्न होने से उनकी भिन्नता और उत्कृष्टता सिद्ध करने की होड़ मची थी। इसी के लिए अभिषेक की कंपनी क्रिसेंट कॉर्पोरेशन को नब्बे लाख का प्रचार अभियान मिला था।

आजकल अभिषेक के जिम्मे मॉडल का चुनाव था। वह एक ब्यूटी पार्लर की मालकिन निकिता पर दबाव डाल रहा था कि वह अपनी बेटी तान्या को मॉडलिंग करने दें। इस सिलसिले में वह कई बार 'रोजेज' पार्लर में गया। इसी को ले कर पति-पत्नी में तनाव हो गया।

राजुल का मानना था कि रोजेज अच्छी जगह नहीं है। वहाँ सौंदर्य उपचार की आड़ में गलत धंधे होते हैं। उसका कहना था कि विज्ञापन फिल्म बनाने का काम उनकी कंपनी को मुंबई इकाई करे, यहाँ अहमदाबाद में अच्छी फिल्म बनना मुमकिन नहीं है। अभिषेक का कहना था कि वह बंबइया विज्ञापन फिल्मों से अघा गया है। वह यहीं मौलिक काम कर दिखाएगा। 'यों कहो कि तुम्हें माडल की तलाश में मजा आ रहा है।' राजुल ने ताना मारा। 'यही समझ लो। यह मेरा काम है, इसी की मुझे तनख्वाह मिलती है।'
'मजे हैं। तनख्वाह भी मिलती है, लड़की भी मिलती है।' अभिषेक उखड़ गया, 'क्या मतलब तुम्हारा? तुम हमेशा टेढ़ा सोचती हो। जैसे तुम्हारे टेढ़े दाँत हैं वैसी टेढ़ी तुम्हारी सोच है।'

राजुल का, ऊपर नीचे का एक-एक दाँत टेढ़ा उगा हुआ था। विशेष कोण से देखने पर वह हँसते हुए अच्छा लगता था। 'शुरू में इसी बाँके दाँत पर आप फिदा हुए थे।' राजुल ने कहा, 'आज आपको यह भद्दा लगने लगा।' 'फिर तुमने गलत शब्द इस्तेमाल किया। बाँका शब्द दाँत के साथ नहीं बोला जाता। बाँकी अदा होती है, दाँत नहीं।'
'शब्द अपनी जगह से हट भी सकते हैं। शब्द पत्थर नहीं हैं जो अचल रहें।' 'तुम अपनी भाषा की कमजोरी छुपा रही हो।' 'कोई भी बात हो, सबसे पहले तुम मेरे दोष गिनाने लगते हो।' 'तुम मेरा दिमाग खराब कर देती हो।'
'अच्छा सॉरी, पर अब तुम निकिता के यहाँ नहीं जाओगे। इससे अच्छा है तुम यूनिवर्सिटी की छात्राओं में सही चेहरा तपाश करो।' 'तपास नहीं, तलाश करो।'
'तलाश सही पर तुम रोजेज नहीं जाओगे।'

जब से राजुल ने नौकरी छोड़ी उसके अंदर असुरक्षा की भावना घर कर गई थी। साढ़े चार साल की नौकरी के बाद वह सिर्फ इसलिए हटा दी गई क्योंकि उसकी विज्ञापन एजेंसी मानती थी कि घर और दफ्तर दोनों मोर्चे सँभालना उसके बस की बात नहीं। खास तौर पर जब वह गर्भवती थी, उसके हाथ से सारे महत्वपूर्ण कार्य ले कर साधना सिंह को दे दिए गए। अंकुर के पैदा होने तक दफ्तर में माहौल इतना बिगड़ गया कि प्रसव के पश्चात राजुल ने त्यागपत्र ते दिया। पर तब से वह पति के प्रति बड़ी सतर्क और संदेहशील हो गई थी। उसे लगता था अभिषेक उतना व्यस्त नहीं जितना वह नाट्य करता है। फिर विज्ञापन कंपनी की दुनिया परिवर्तन और आकर्षण से भरपूर थी। रोज नई-नई लड़कियाँ मॉडल बनने का सपना आँखों में लिए हुए कंपनी के द्वार खटखटाती। उनके शोषण की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता था।

विज्ञापन एजेंसी का सारा संजाल स्वयं देख लेने से इधर कई दिनों से राजुल को जो अन्य सवाल उद्वेलित कर रहे थे, उन पर वह अभिषेक के साथ बहस करना चाहती थी। पर अभिषेक जब भी घर आता, लंबी बातचीत के मूड में हरगिज न होता। बल्कि वह चिड़चिड़ा ही लौटता। उस दिन वे खाना खा रहे थे। टी.वी. चल रहा था। समाचार से पहले 'स्पार्कल' टूथपेस्ट का विज्ञापन फ्लैश हुआ। इसकी कॉपी अभिषेक ने तैयार की थी।
अंकुर चिल्लाया, 'पापा का एड, पापा का एड।'

यह विज्ञापन आज पाँचवीं बार आया था पर वे सब ध्यान से देख रहे थे। विज्ञापन में पार्टी का दृश्य था जिसमें हीरो के कुछ कहने पर हिरोइन हँसती है। उसकी हँसी में हर दाँत मे मोती गिरते हैं। हीरो उन्हें अपनी हथेली पर

रोक लेता है। सारे मोती इकट्ठे हो कर 'स्पार्कल' टूथपेस्ट की ट्यूब बन जाते हैं। अगले शॉट में हीरो हीरोइन लगभग चुंबनबद्ध हो जाते हैं।

अभिषेक ने कहा, 'राजुल कैसा लगा एड?' 'ठीक ही है।' राजुल ने कहा। उसके उत्साहविहीन स्वर से अभिषेक का मूड उखड़ गया। उसे लगा राजुल उसके काम को जीरो दे रही है, 'ऐसी श्मशान आवाज में क्यों बोल रही हो?'
'नहीं, मैं सोच रही थी, विज्ञापन कितनी अतिशयोक्ति करते हैं। सच्चाई यह है कि न किसी के हँसने से फूल झरते हैं न मोती, फिर भी मुहावरा है कि लीक पीट रहा है।'
'सचाई तो यह है कि मॉडल लीना भी स्पार्कल इस्तेमाल नहीं करती हैं। वह प्रतिद्वंद्वी कंपनी का टिक्को इस्तेमाल करती है। पर हमें सच्चाई नहीं, प्रॉडक्ट बेचनी है।'
'पर लोग तो तुम्हारे विज्ञापनों को ही सच मानते हैं। क्या यह उनके प्रति धोखा नहीं है?' 'बिल्कुल नहीं। आखिर हम टूथपेस्ट की जगह टूथपेस्ट ही दिखा रहे हैं, घोड़े की लीद नहीं। सभी टूथपेस्टों में एक-सी चीजें पड़ी होती हैं। किसी में रंग ज्यादा होता है किसी में कम। किसी में फोम ज्यादा, किसी में कम।'
'ऐसे में कॉपीराइटर की नैतिकता क्या कहती है?'
'ओ शिट। सीधा-सादा एक प्रॉडक्ट बेचना है, इसमें तुम नैतिकता और सच्चाई जैसे भारी-भरकम सवाल मेरे सिर पर दे मार रही हो। मैंने आई.आई.एम. में दो साल भाड़ नहीं झोंका। वहाँ से मार्केटिंग सीख कर निकला हूँ। आइ कैन सैल ए डैड रैट (मैं मरा हुआ चूहा भी बेच सकता हूँ) यह सच्चाई, नैतिकता सब मैं दर्जा चार तक मॉरल साइंस में पढ़ कर भूल चुका हुआ हूँ। मुझे इस तरह की डोज मत पिलाया करो, समझी?'

राजुल मन ही मन उसे गाली देती बर्तन समेट कर रसोई में चला गई। अभिषेक मुँह फेर कर सो गया। अगले दिन पवन आया। वह अंकुर के लिए छोटा-सा क्रिकेट बैट और गेंद लाया था। अंकुर तुरंत बालकनी से अपने दोस्तों को आवाज देने लगा, 'शुब्बू, रुनझुन, जल्दी आओ, बैट बाल खेलना।'

अभिषेक अभी ऑफिस से नहीं लौटा था। राजुल ने दो ग्लास कोल्ड कॉफी बनाई। एक ग्लास पवन को थमा कर बोली, 'तुम्हें विज्ञापनों की दुनिया कैसी लगती है?'
'बहुत अच्छी, जादुई। राजुल, मुल्क की सारी हसीन लड़कियाँ विज्ञापनों में चली गई हैं, तभी राजकोट की सड़कों पर एक भी हसीना नजर नहीं आती।'
'गम्मत जम्मत छोड़ो, सीरियसली बोलो, ऐसा नहीं लगता कि मार्केटिंग के लिए विज्ञापन झूठ पर झूठ बोलते हैं।'

'मुझे ऐसा नहीं लगता। यह तो अभियान है, इसमें सच और झूठ की बात कहाँ आती है?'

तभी अभिषेक भी आ गया। आज वह अच्छे मूड में था। उसके टूथपेस्टवाले विज्ञापन को सर्वश्रेष्ठ विज्ञापन का सम्मान मिला था। उसने कहा, 'राजुल, कल तुम मुझे कंडेम कर रही थीं, आज मुझे उसी कॉपी पर एवार्ड मिला।'
'कांग्रेचुलेशंस।' पवन और राजुल ने कहा।

'कल तो तुम लानतें कस रही थीं। मेरी परदादी की तरह बोल रही थीं।'

'जब एथिक्स की यानी नैतिकता की बात आएगी मैं फिर कहूँगी कि विज्ञापन झूठ बोलते हैं। पर अभि, ऐसा नहीं है कि सिर्फ तुम ऐसा करते हो, सब ऐसा करते हैं। जनता को बेवकूफ बनाते हैं।'

'जनता को शिक्षा और सूचना भी तो देते हैं।' पवन ने कहा।
'पर साथ में जनता की उम्मीदों को बढ़ा कर उसका पैसा नष्ट करवाते हैं।' राजुल ने कहा।

'हाँ, हाँ, आज तक मैंने ऐसा विज्ञापन नहीं देखा जो कहता हो यह चीज न खरीदिए।' अभिषेक ने कहा, 'विज्ञापन की दुनिया खर्च और बिक्री की दुनिया है। हम सपनों के सौदागर हैं, जिसे चाहिए बाजार जाए, सपनों और उम्मीदों से भरी ट्यूब खरीद लें। ये विज्ञापन का ही कमाल है कि हमारे तीन सदस्योंवाले परिवार में तीन तरह के टूथपेस्ट आते हैं। अंकुर को धारियोंवाला टूथपेस्ट पसंद है, तुम्हें वह षोडषीवाला और मुझे साँस की बू दूर करनेवाला। टूथपेस्ट तो फिर भी गनीमत है, तुम्हें पता है- डिटरजेंट की विज्ञापनबाजी में और भी अँधेर है। हम लोग सोना डिटरजेंट की एड फिल्म जब शूट कर रहे थे तो सीवर्स के क्लीन डिटरजेंट से हमने बाल्टी में झाग उठवाए थे। क्लीन में सोना से ज्यादा झाग पैदा करने की ताकत है।'
पवन ने कहा, 'दरअसल बाजार के अर्थशास्त्र में नैतिकता जैसा शब्द ला कर, राजुल, तुम सिर्फ कनफ्यूजन फैला रही हो। मैंने अब तक पाँच सौ किताबें तो मैनेजमेंट और मार्केटिंग पर पढ़ी होंगी। उनमें नैतिकता पर कोई चैप्टर नहीं है।'

स्टैला डिमैलो इंटरप्राइज कार्पोरेशन में बराबर की पार्टनर थी और उसकी कंपनी गुर्जर गैस कंपनी को कंप्यूटर सप्लाई करती थी। पहले तो वह पवन के लिए कारोबारी चिट्ठियों पर महज एक हस्ताक्षर थी पर जब कंप्यूटर की दो-एक समस्या समझने पवन शिल्पा के साथ उसके ऑफिस गया तो इस दुबली-पतली हँसमुख लड़की से उसका अच्छा परिचय हो गया।

स्टैला की उम्र मुश्किल से चौबीस साल थी पर उसने अपने माता-पिता के साथ आधी दुनिया घूम रखी थी। उसकी माँ सिंधी और पिता ईसाई थे। माँ से उसे गोरी रंगत मिली थी और पिता से तराशदार नाक-नक्श। जींस और टॉप में वह लड़का ज्यादा और लड़की कम नजर आती। उसके ऑफिस में हर समय गहमागहमी रहती। फोन बजता रहता, फैक्स आते रहते। कभी किसी फैक्टरी से बीस कंप्यूटर्स का एक साथ ऑर्डर मिल जाता, कभी कहीं कांफ्रेंस से बुलावा आ जाता। उसने कई तकनीशियन रखे हुए थे। अपने व्यवसाय के हर पहलू पर उसकी तेज नजर रहती।

इस बार पवन अपने घर गया तो उसने पाया वह अपने नए शहर और काम के बारे में घरवालों को बताते समय कई बार स्टैला का जिक्र कर गया। सघन बी.एससी. के बाद हार्डवेयर का कोर्स कर रहा था। पवन ने कहा, 'तुम इस बार मेरे साथ राजकोट चलो, तुम्हें मैं ऐसे कंप्यूटर वर्ल्ड में प्रवेश दिलाऊँगा कि तुम्हारी आँखें खुली रह जाएँगी।'
सघन ने कहा, 'जाना होगा तो हैदराबाद जाऊँगा, वह तो साइबर सिटी है।'
'एक बार तुम एंटरप्राइज ज्वाइन करोगे तो देखोगे वह साइबर सिटी से कम नहीं।'
माँ ने कहा, 'इसको भी ले जाओगे तो हम दोनों बिल्कुल अकेले रह जाएँगे। वैसे ही सीनियर सिटीजन कॉलोनी बनती जा रही है। सबके बच्चे पढ़ लिख-कर बाहर चले जा रहे हैं। हर घर में, समझो, एक बूढ़ा, एक बूढ़ी, एक कुत्ता और एक कार बस यह रह गया है।'

'इलाहाबाद में कुछ भी बदलता नहीं है माँ। दो साल पहले जैसा था वैसा ही अब भी है। तुम भी राजकोट चली आओ।'

'और तेरे पापा? वे यह शहर छोड़ कर जाने को तैयार नहीं है।'
पापा से बात की गई। उन्होंने साफ इनकार कर दिया। 'शहर छोड़ने की भी एक उम्र होती है, बेटे। इससे अच्छा है तुम किसी ऐसी कंपनी में हो जाओ जो आस-पास कहीं हो।' 'यहाँ मेरे लायक नौकरी कहाँ, पापा। ज्यादा से ज्यादा नैनी में नूरामेंट की मार्केटिंग कर लूँगा।'

'दिल्ली तक भी आ जाओ तो? सच, दिल्ली आना-जाना बिल्कुल मुश्किल नहीं है। रात को प्रयागराज एक्सप्रेस से चलो, सबेरे दिल्ली। कम से कम हर महीने तुम्हें देख तो लेंगे। या कलकत्ते आ जाओ। वह तो महानगर है।'
'पापा, मेरे लिए शहर महत्वपूर्ण नहीं है, कैरियर है। अब कलकत्ते को ही लीजिए। कहने को महानगर है पर मार्केटिंग की दृष्टि से एकदम लद्धड़। कलकत्ते में प्रोड्यूसर्स का मार्केट है, कंज्यूमर्स का नहीं। मैं ऐसे शहर में रहना चाहता हूँ जहाँ कल्चर हो न हो, कंज्यूमर कल्चर जरूर हो। मुझे संस्कृति नहीं, उपभोक्ता संस्कृति चाहिए, तभी मैं कामयाब रहूँगा।' माता-पिता को पवन की बातों ने स्तंभित कर दिया। बेटा उस उम्मीद को भी खत्म किए दे रहा था जिसकी डोर से बँधे-बँधे वे उसे टाइम्स ऑफ इंडिया की दिल्ली रिक्तियों के कागज डाक से भेजा करते थे।

रात जब पवन अपने कमरे में चला गया राकेश पांडे ने पत्नी से कहा, 'आज पवन की बातें सुन कर मुझे बड़ा धक्का लगा। इसने तो घर के संस्कारों को एकदम ही त्याग दिया।' रेखा दिन भर के काम से पस्त थी, 'पहले तुम्हें भय था कि बच्चे कहीं तुम जैसे आदर्शवादी न बन जाएँ। इसीलिए उसे एम.बी.ए. कराया। अब वह यथार्थवादी बन गया है तो तुम्हें तकलीफ हो रही है। जहाँ जैसी नौकरी कर रहा है, वहीं के कायदे- कानून तो ग्रहण करेगा।' 'यानी तुम्हें उसके एटिट्यूड से कोई शिकायत नहीं है।' राकेश हैरान हुए। 'देखो, अभी उसकी नई नौकरी है। इसमें उसे पाँव जमाने दो। घर से दूर जाने का मतलब यह नहीं होता कि बच्चा घर भूल गया है। कैसे मेरी गोद में सिर रख कर दोपहर को लेटा हुआ था। एम.ए., बी.ए. करके यहीं चप्पल चटकाता रहता, तब भी तो हमें परेशानी होती।'

रेखा का चचेरा भाई भी नागपुर में मार्केटिंग मैनेजर था। उसे थोड़ा अंदाज था कि इस क्षेत्र में कितनी स्पर्धा होती है। वह एक फटीचर पाठशाला में अध्यापिका थी। उसके लिए बेटे की कामयाबी गर्व का विषय थी। उसकी सहयोगी अध्यापिकाओं के बच्चे पढ़ाई के बाद तरह-तरह के संघर्षों में लगे थे।

इस बार पवन अपने घर गया तो उसने पाया वह अपने नए शहर और काम के बारे में घरवालों को बताते समय कई बार स्टैला का जिक्र कर गया। सघन बी.एस॰सी. के बाद हार्डवेयर का कोर्स कर रहा था। पवन ने कहा, 'तुम इस बार मेरे साथ राजकोट चलो, तुम्हें मैं ऐसे कंप्यूटर वर्ल्ड में प्रवेश दिलाऊँगा कि तुम्हारी आँखें खुली रह जाएँगी।'
सघन ने कहा, 'जाना होगा तो हैदराबाद जाऊँगा, वह तो साइबर सिटी है।'
'एक बार तुम एंटरप्राइज ज्वाइन करोगे तो देखोगे वह साइबर सिटी से कम नहीं।'
माँ ने कहा, 'इसको भी ले जाओगे तो हम दोनों बिल्कुल अकेले रह जाएँगे। वैसे ही सीनियर सिटीजन कॉलोनी

बनती जा रही है। सबके बच्चे पढ़ लिख कर बाहर चले जा रहे हैं। हर घर में, समझो, एक बूढ़ा, एक बूढ़ी, एक कुत्ता और एक कार बस यह रह गया है।'

'इलाहाबाद में कुछ भी बदलता नहीं है माँ। दो साल पहले जैसा था वैसा ही अब भी है। तुम भी राजकोट चली आओ।'

'और तेरे पापा? वे यह शहर छोड़ कर जाने को तैयार नहीं है।'

पापा से बात की गई। उन्होंने साफ इनकार कर दिया।
'शहर छोड़ने की भी एक उम्र होती है, बेटे। इससे अच्छा है तुम किसी ऐसी कंपनी में हो जाओ जो आस-पास कहीं हो।'

'यहाँ मेरे लायक नौकरी कहाँ, पापा। ज्यादा से ज्यादा नैनी में नूरामेंट की मार्केटिंग कर लूँगा।'

'दिल्ली तक भी आ जाओ तो? सच दिल्ली आना-जाना बिल्कुल मुश्किल नहीं है। रात को प्रयागराज एक्सप्रेस से चलो, सबेरे दिल्ली। कम से कम हर महीने तुम्हें देख तो लेंगे। या कलकत्ते आ जाओ। वह तो महानगर है।'

'पापा, मेरे लिए शहर महत्वपूर्ण नहीं है, कैरियर है। अब कलकत्ते को ही लीजिए। कहने को महानगर है पर मार्केटिंग की दृष्टि से एकदम लद्धड़। कलकत्ते में प्रोड्यूसर्स का मार्केट है, कंज्यूमर्स का नहीं। मैं ऐसे शहर में रहना चाहता हूँ जहाँ कल्चर हो न हो, कंज्यूमर कल्चर जरूर हो। मुझे संस्कृति नहीं उपभोक्ता संस्कृति चाहिए, तभी मैं कामयाब रहूँगा।' माता-पिता को पवन की बातों ने स्तंभित कर दिया। बेटा उस उम्मीद को भी खत्म किए दे रहा था जिसकी डोर से बँधे-बँधे वे उसे टाइम्स ऑफ इंडिया की दिल्ली रिक्तियों के कागज डाक से भेजा करते थे।

रात जब पवन अपने कमरे में चला गया राकेश पांडे ने पत्नी से कहा, 'आज पवन की बातें सुन कर मुझे बड़ा धक्का लगा। इसने तो घर के संस्कारों को एकदम ही त्याग दिया।'

रेखा दिन भर के काम से पस्त थी, 'पहले तुम्हें भय था कि बच्चे कहीं तुम जैसे आदर्शवादी न बन जाएँ। इसीलिए उसे एम.बी.ए. कराया। अब वह यथार्थवादी बन गया है तो तुम्हें तकलीफ हो रही है। जहाँ जैसी नौकरी कर रहा है, वहीं के कायदे कानून तो ग्रहण करेगा।'

'यानी तुम्हें उसके एटिट्यूड से कोई शिकायत नहीं है।' राकेश हैरान हुए।
'देखो, अभी उसकी नई नौकरी है। इसमें उसे पाँव जमाने दो। घर से दूर जाने का मतलब यह नहीं होता कि बच्चा घर भूल गया है। कैसे मेरी गोद में सिर रख कर दोपहर को लेटा हुआ था। एम.ए., बी.ए. करके यहीं चप्पल चटकाता रहता, तब भी तो हमें परेशानी होती।'

रेखा का चचेरा भाई भी नागपुर में मार्केटिंग मैनेजर था। उसे थोड़ा अंदाज था कि इस क्षेत्र में कितनी स्पर्धा होती है। वह एक फटीचर पाठशाला में अध्यापिका थी। उसके लिए बेटे की कामयाबी गर्व का विषय थी। उसकी सहयोगी अध्यापिकाओं के बच्चे पढ़ाई के बाद तरह-तरह के संघर्षों में लगे थे।

कोई आई.ए.एस, पी.सी.एस. परीक्षाओं को पार नहीं कर पा रहा था तो किसी को बैंक प्रतियोगी परीक्षा सता रही थी। किसी का बेटा कई इंटरव्यू में असफल होने के बाद नशे की लत में पड़ गया था तो किसी की बेटी हर साल पी.एम.टी. में अटक जाती। जीवन के पचपनवें साल में रेखा को यह सोच कर बहुत अच्छा लगता कि उसके दोनों बच्चे पढ़ाई में अव्वल रहे और उन्होंने खुद ही अपने कैरियर की दिशा तय कर ली। सघन अभी छोटा था पर वह भी जब अपने कैरियर पर विचार करता, उसे शहरों में ही संभावनाएँ नजर आतीं। वह दोस्ती से माँग कर देश-विदेश के कंप्यूटर जर्नल पढ़ता। उसका ज्यादा समय ऐसे दोस्तों के घरों में बीतता जहाँ कंप्यूटर होता।

राकेश बोले, 'तुम समझ नहीं रही हो। पवन के बहाने एक पूरी की पूरी युवा पीढ़ी को पहचानो। ये अपनी जड़ों से कट कर जीनेवाले लड़के समाज की कैसी तस्वीर तैयार करेंगे।'

'और जो जड़ों से जुड़े रहे हैं उन्होंने इन निन्यानवें वर्षों में कौन-सा परिवर्तन किया है। तुम्हें इतना ही कष्ट है तो क्यों करवाया था पवन को एम.बी.ए.। घर के बरामदे में दुकान खुलवा देते, माचिस और साबुन बेचता रहता।'
'तुम मूर्ख हो, ऐसा भी नहीं लगता मुझे, बस मेरी बात काटना तुम्हें अच्छा लगता है।'

'अच्छा अब सो जाओ। और देखो, सुबह पवन के सामने फिर यही बहस मत छेड़ देना। चार रोज को बच्चा घर आया है, राजी-खुशी रहे, राजी-खुशी जाए।'

रेखा ने रात को तो पुत्र की पक्षधरता की पर अगले दिन स्कूल से घर लौटी तो पवन से उसकी खटपट हो गई। दोपहर में धोबी कपड़े इस्त्री कर के लाया था। आठ कपड़ों के बारह रुपए होते थे पर धोबी ने सोलह माँगे। पवन ने सोलह रुपए दे दिए। पता चलने पर रेखा उखड़ गई। उसने कहा, 'बेटे, कपड़े ले कर रख लेने थे, हिसाब मैं अपने आप करती।'

पवन बोला, 'माँ क्या फर्क पड़ा, मैंने दे दिया।'

रेखा ने कहा, 'टूरिस्ट की तरह तुमने उसे मनमाने पैसे दे दिए, वह अपना रेट बढ़ा देगा तो रोज भुगतना तो मुझे पड़ेगा।'

पवन को टूरिस्ट शब्द पत्थर की तरह चुभ गया। उसका गोरा चेहरा क्रोध से लाल हो गया, 'माँ, आपने मुझे टूरिस्ट कह दिया। मैं अपने घर आया हूँ, टूर पर नहीं निकला हूँ।'

शाम तक पवन किचकिचाता रहा। उसने पिता से शिकायत की। पिता ने कहा, 'यह निहायत टुच्ची-सी बात है। तुम क्यों परेशान हो रहे हो। तुम्हें पता है तुम्हारी माँ की जुबान बेलगाम है। छोटी-सी बात पर कड़ी-सी बात जड़ देती है।'
नौकरी लग जाने के साथ पवन बहुत नाजुकमिजाज हो गया था। उसे ऑफिस में अपना वर्चस्व और शक्ति याद हो आई, 'दफ्तर में सब मुझे पवन सर या फिर मिस्टर पांडे कहते हैं। किसी की हिम्मत नहीं कि मेरे आदेश की अवहेलना करे। घर में किसी को अपनी मर्जी से मैं चार रुपए नहीं दे सकता।'

रेखा सहम गई, 'बेटे, मेरा मतलब यह नहीं था मैं तो सिर्फ यह कर रही थी कि कपड़े रोज इस्तिरी होते हैं, एक बार इन लोगों को ज्यादा पैसे दे दो तो ये एकदम सिर चढ़ जाते हैं।' और भी छोटी-छोटी कितनी ही बातें थीं जिनमें माँ

बेटे का दृष्टिकोण एकदम अलग था। पवन ने कहा, 'माँ, मेरा जन्मदिन इस बार यों ही निकल गया। आपने फोन किया पर ग्रीटिंग कार्ड नहीं भेजा।'

रेखा हैरान रह गई, 'बेटे ग्रीटिंग कार्ड तो बाहरी लोगों को भेजा जाता है। तुम्हें पता है तुम्हारा जन्मदिन हम कैसे मनाते हैं। हमेशा की तरह मैं मंदिर गई, स्कूल में सबको मिठाई खिलाई, रात को तुम्हें फोन किया।'
'मेरे सब कलीग्ज हँसी उड़ा रहे थे कि तुम्हारे घर से कोई ग्रीटिंग कार्ड नहीं आया।'

माँ को लगा उन्हें अपने बेटे को प्यार करने का नया तरीका सीखना पड़ेगा। मुश्किल से पाँच दिन ठहरा पवन। रेखा ने सोचा था उसकी पसंद की कोई न कोई डिश रोज बना कर उसे खिलाएगी पर पहले ही दिन उसका पेट खराब हो गया। पवन ने कहा, 'माँ, मैं नींबू पानी के सिवा कुछ नहीं लूँगा। दोपहर को थोड़ी-सी खिचड़ी बना देना। और पानी कौन-सा इस्तेमाल करते हैं आप लोग?'

'वही जो तुम जन्म से पीते आए हो, गंगा जल आता है हमारे नल में।' रेखा ने कहा।
'तब से अब तक गंगा जी में न जाने कितना मल-मूत्र विसर्जित हो चुका है। मैं तो कहूँगा यह पानी आपके लिए भी घातक है। एक्वागार्ड क्यों नहीं लगाते?'

'याद करो, तुम्हीं कहा करते थे फिल्टर से अच्छा है हम अपने सिस्टम में प्रतिरोधक शक्ति का विकास करें।'

'वह सब फिजूल की भावुकता थी, माँ। तुम इस पानी की एक बूँद अगर माइक्रोस्कोप के नीचे देख लो तो कभी न पियो।'

पवन को अपनी जन्मभूमि का पानी रास नहीं आ रहा था। शाम को पवन ने सघन से बारह बोतलें मिनरल वाटर मँगाया। रसोई के लिए रेखा ने पानी उबालना शुरू किया। नल का जल विषतुल्य हो गया। देश में परदेसी हो गया पवन।
तबियत कुछ सँभलने पर अपने पुराने दोस्तों की तलाश की। पता चला अधिकांश शहर छोड़ चुके हैं या इतने ठंडे और अजनबी हो गए हैं कि उनके साथ दस मिनट बिताना भी सजा है।

पवन ने दुखी हो कर पापा से कहा, 'मैं नाहक इतनी दूर आया। सघन सारा दिन कंप्यूटर सेंटरों की खाक छानता है। आप अखबारों में लगे रहते हैं। माँ सुबह की गई शाम को लौटती हैं। क्या मिला मुझे यहाँ आ कर?'

'तुमने हमें देख लिया, क्या यह काफी नहीं?'

'यह काम तो मैं एंटरप्राइज के सैटलाइट फोन से भी कर सकता था। मुझे लगता है यह शहर नहीं जिसे मैं छोड़ कर गया था।'

'शहर और घर रहने से ही बसते हैं, बेटा। अब इतनी दूर एक अनजान जगह को तुमने अपना ठिकाना बनाया है। पराई भाषा, पहनावा और भोजन के बावजूद वह तुम्हें अपना लगने लगा होगा।'

'सच तो यह है पापा जहाँ हर महीने वेतन मिले, वही जगह अपनी होती है और कोई नहीं।'

'केवल अर्थशास्त्र से जीवन नहीं कटता पवन, उसमें थोड़ा दर्शन, थोड़ा अध्यात्म और ढेर-सी संवेदना भी पनपनी चाहिए।'

'आपको पता नहीं दुनिया कितनी तेजी से आगे बढ़ रही। अब धर्म, दर्शन, और अध्यात्म जीवन में हर समय रिसनेवाले फोड़े नहीं हैं। आप सरल मार्ग के शिविर में कभी जा कर देखिए। चार-पाँच दिन का कोर्स होता है, वहाँ जा कर आप मेडिटेट कीजिए और छठे दिन वापस अपने काम से लग जाइए। यह नहीं कि डी.सी. बिजली की तरह हमेशा के लिए उससे चिपक जाइए।' 'तुमने तो हर चीज की पैकेजिंग ऐसी कर ली है कि जेब में समा जाए। भक्ति की कपस्यूल बना कर बेचते हैं आजकल के धर्मगुरु। सुबह-सुबह टी.वी. के सभी चैनलों पर एक न एक गुरु प्रवचन देता रहता है। पर उनमें वह बात कहाँ जो शंकराचार्य में थी या स्वामी विवेकानंद में।'

'हर पुरानी चीज आपको श्रेष्ठ लगती है, यह आपकी दृष्टि का दोष है, पापा। अगर ऐसा ही है तो आधुनिक चीजों का आप इस्तेमाल भी क्यों करते हैं, फेंक दीजिए अपना टी.वी. सेट, टेलीफोन और कुकिंग गैस। आप नई चीजों फायदा भी लूटते हैं और उनकी आलोचना भी करते हैं।'

'पवन, मेरी बात सिर्फ चीजों तक नहीं है।'

'मुझे पता है। आप अध्यात्म और धर्म पर बोल रहे थे। आप कभी मेरे स्वामी जी को सुनिए। सबसे पहले तो उन्होंने यही समझाया है कि धर्म जहाँ खत्म होता है, अध्यात्म वहीं शुरू होता है। आप बचपन में मुझे शंकर का अद्वैतवात समझाते थे। मेरे कुछ पल्ले नहीं पड़ता था। आपने जीवन में मुझे बहुत कन्फूज किया है पर सरल मार्ग में एकदम सीधी सच्ची यथार्थवादी बाते हैं।'

पिता आहत हो देखते रह गए। उनके बेटे के व्यक्तित्व में भौतिकतावाद, अध्यात्म और यथार्थवाद की कैसी त्रिपथगा बह रही है।

राजकोट ऑफिस से पवन के लिए ट्रंककॉल आया कि सोमवार को वह सीधे अहमदाबाद ऑफिस पहुँचे। सभी मार्केटिंग मैनेजरों की उच्च स्तरीय बैठक थी। पवन का मन एकाएक उत्साह से भर गया। पिछले पाँच दिन पाँच युग की तरह बीते थे। जाते-जाते वह परिवार के प्रति बहुत भावुक हो आया।

'माँ, तुम राजकोट आना। पापा, आप भी। मेरे पास बड़ा-सा फ्लैट है। आपको जरा भी दिक्कत नहीं होगी। अब तो कुक भी मिल गया है।'

'अब तेरी शादी भी कर दें, क्यों।' रेखा ने पवन का मन टटोला।
'माँ, शादी ऐसे थोड़े ही होगी। पहले तुम मेरे साथ सारा गुजरात घूमो। अरे वहाँ मेरे जैसे लड़कों की बड़ी पूछ है। वहाँ के गुज्जू लड़के बड़े पिचके-दुचके-से होते हैं। मेरा तो पापा जैसा कद देख कर ही लट्टू हो जाते हैं सब।'

'कोई लड़की देख रखी है क्या?' रेखा ने कहा।

'एक हो तो नाम बताऊँ। तुम आना तुम्हें सबसे मिलवा दूँगा।'

'पर शादी तो एक से ही करनी होती है।' पवन हँसा। भाई को लिपटाता हुआ बोला, 'जान टमाटर, तुम कब आओगे।'

'पहले अपना कंप्यूटर बना लूँ।'

'इसमें तो बहुत दिन लगेंगे।'

'नहीं भैया, ममी एक बार दिल्ली जाने दें तो नेहरू प्लेस से बाकी का सामान ले आऊँ।'
'ले ये हजार रुपए तू रख ले काम आएँगे।'

मीटिंग में भाग लेनेवाले सभी सदस्यों को प्रसिडेंसी में ठहराया गया था। दो दिन के चार सत्रों में विपणन के सभी पहलुओं पर खुल कर बहस हुई। हैरानी की बात यह थी कि ईंधन जैसी आवश्यक वस्तु को भी ऐच्छिक उपभोक्ता सामग्री के वर्ग में रख कर इसके प्रसार और विकास का कार्यक्रम तैयार किया जा रहा था। बहुत-सी ईंधन कंपनियाँ मैदान में आ गईं थीं। कुछ बहुराष्ट्रीय तेल कंपनियाँ एल.पी.जी. इकाई खोल चुकी थीं, कुछ खोलनेवाली थीं। दूसरी तरफ कुछ उद्योगपतियों ने भी एल.पी.जी बनाने के अधिकार हासिल कर लिए थे। इससे स्पर्धा तो बढ़ ही रही थी। व्यावसायिक उपभोक्ता भी कम हो रहे थे। निजी उद्योगपति मोठाबाई नानूभाई अपनी सभी फर्मों में अपनी बनाई एल.पी.जी. इस्तेमाल कर रहे थे जबकि पहले वहाँ जी.जी.सी.एल. की सिलेंडर जाती थी। बहुराष्ट्रीय कंपनी की फितरत थी कि शुरू में वह अपने उत्पाद का दाम बहुत कम रखती। जब उसका नाम और वस्तु लोगों की निगाह में चढ़ जाते वह धीरे से अपना दाम बढ़ा देती। जी.जी.सी.एल. के मालिकों के लिए ये सब परिवर्तन सिरदर्द पैदा कर रहे थे। उन्होंने साफ तौर पर कहा, 'पिछले पाँच वर्ष में कंपनी को साठ करोड़ का घाटा हुआ है। हम आप सबको बस दो वर्ष देते हैं। या घाटा कम कीजिए या इस इकाई को बंद कीजिए। हमारा क्या है, हम डेनिम बेचते थे, डेनिम बेचते रहेंगे। पर यह आप लोगों का फेलियर होगा कि इतनी बड़ी-बड़ी डिग्री और तनख्वाह ले कर भी आपने क्या किया। आप स्टडी कीजिए ऐसा क्या है जो एस्सो और शेल में हैं और जी.जी.सी.एल. में नहीं। वे भी हिंदुस्तानी कर्मचारियों से काम लेते हैं, हम भी। वे भी वही लाल सिलिंडर बनाते हैं। हम भी।'

युवा मैनेजरों में एम.डी. की इस स्पीच से खलबली मच गई। एल.पी.जी. विभाग के अधिकारियों के चेहरे उतर गए। समापन सत्र शाम सात बजे संपन्न हुआ तब बहुतों को लगा जैसे यह उनका विदाई समारोह भी है।

पवन भी थोड़ा उखड़ गया। वह अपनी रिपोर्ट भी प्रस्तुत नहीं कर पाया कि सौराष्ट्र के कितनें गाँवों में उसकी इकाई ने नए आर्डर लिए और कहाँ-कहाँ से अन्य कंपनियों को अपदस्थ किया। रिपोर्ट की एक कॉपी उसने एम.डी. के सेक्रेटरी गायकवाड़ को दे दी।

राजकोट जाने से पहले अभिषेक से भी मिलना था। अनुपम उसके साथ था। उन्होंने घर पर फोन किया। पता चला अभी दफ्तर से नहीं आया।

वे दोनों आश्रम रोड उसके दफ्तर की तरफ चल दिए। अनुपम ने कहा, 'मैं तो घर जा कर सबसे पहले अपना बायोडाटा अप टू डेट करता हूँ। लगता है यहाँ छँटनी होनेवाली है।'

पवन हँसा, 'बहुराष्ट्रीय कंपनियों से संघर्ष करने का सबसे अच्छा तरीका है कि उनमें खुद घुस जाओ।'

अनुपम ने खुशी जताई, 'वाह भाई, यह तो मैंने सोचा भी नहीं था।'

अभिषेक अपना काम समेट रहा था। दोस्तों को देख चेहरा खिल उठा।

'पिछले बारह घंटे से मैं इस प्रेत के आगे बैठा हूँ ।' उसने अपने कंप्यूटर की तरफ इशारा किया, 'अब में और नहीं झेल सकता। चलो कहीं बैठ कर कॉफी पीते हैं, फिर घर चलेंगे।'

वे कॉफी हाउस में अपने भविष्य से अधिक अपनी कंपनियों के भविष्य की चिंता करते रहे।अभिषेक ने कहा, 'निजी सेक्टर में सबसे खराब बात वही है, नथिंग इज ऑन पेपर। एम.डी. ने कहा घाटा है तो मानना पड़ेगा कि घाटा है। पब्लिक सेक्टर मैं कर्मचारी सिर पर चढ़ जाते हैं, पाई-पाई का हिसाब दिखाना पड़ता है।'

फिर भी पब्लिक सेक्टर में बीमार इकाइयों की बेशुमार संख्या है। प्राइवेट सेक्टर में ऐसा नहींहै।'

अभिषेक हँसा, 'मुझसे ज़्यादा कौन जानेगा। मेरे पापा और चाचा दोनों पब्लिक सेक्टर में हैं। आजकल दोनों की कंपनी बंद चल रही हैं। पर पापा और चाचा दोनों बेफिक्र हैं। कहते हैं लेबर कोर्ट से जीत कर एक-एक पैसा वसूल कर लेंगे।'

अभिषेक की कंपनी की साख ऊँची थी और अभिषेक वहाँ पाँच साल से था पर नौकरी को ले कर असुरक्षा बोध उसे भी था। यहाँ हर दिन अपनी कामयाबी का सबूत देना पड़ता। कई बार क्लायंट को पसंद न आने पर अच्छी-भलीकॉपी में तब्दीलियाँ करनी पड़ती तो कभी पूरा प्रोजेक्ट ही कैंसल हो जाता। तब उसे लगता वह नाहक विज्ञापन प्रबंधन में फँस गया, कोई सरकारी नौकरी की होती, चैन की नींद सोता। पर पटरी बदलना रेलों के लिए सुगम होता है, जिदगी के लिए दुर्गम। अब यह उसका परिचित संसार था, इसी में संघर्ष और सफलता निहित थी। अभिषेक ने डिलाइट से चिली पनीर पैक करवाया कि घर चल कर खाना खाएँगे। जैसे ही वे घर में दाखिल हुए देखा राजुल और अंकुर बाहर जाने के लिए बने ठने बैठे हैं। उन्हें देखते ही वे चहक कर बोले, 'अहा, तुम आ गए। चलो आज बाहर खाना खाएँगे। अंकुर शाम से जिद कर रहा है।'

अभिषेक ने कहा, 'आज घर में ही खाते हैं, मैं सब्जी ले आया हूँ।'

राजुल बोली, 'तुमने सुबह वादा किया था शाम को बाहर ले चलोगे। सब्जी फ्रिज में रख देते हैं, कल खाएँगे।'

राजुल ताले लगाने में व्यस्त हो गई। अभिषेक ने पवन और अनुपम से कहा, 'सॉरी यार, कभी-कभी घर में भी कॉपी गलत हो जाती है।'

तीनों थके हुए थे। पवन ने तो अठारह सौ किलोमीटर की यात्रा की थी। पर राजुल और अंकुर का जोश ठंडा करना उन्हें क्रूरता लगी।

स्टैला और पवन ने अपनी जन्मपत्रियाँ कंप्यूटर से मैच कीं तो पाया छत्तीस में से छब्बीस गुण मिलते हैं। पवन ने कहा, 'लगता है तुमने कंप्यूटर को भी घूस दे रखी है।'

स्टैला बोली, 'यह पंडित तो बिना घूस के काम कर देता है।' आकर्षण, दोस्ती और दिलजोई के बीच कुछ देर को उन्होंने यह भुला ही दिया कि इस रिश्ते के दूरगामी समीकरण किस प्रकार बैठेंगे।

स्टैला के माता पिता आजकल शिकागो गए हुए थे। स्टैला के ई-मेल पत्र के जवाब में उन्होंने ई-मेल से बधाई भेजी। पवन ने माता पिता को फोन पर बताया कि उसने लड़की पसंद कर ली है और वे अगले महीने यानी जुलाई

में ही शादी कर लेंगे।

पांडे परिवार पवन की खबर पर हतबुद्ध रह गया। न उन्होंने लड़की देखी थी न उसका घर-बार। आकस्मिकता के प्रति उनके मन में सबसे पहले शंका पैदा हुई। राकेश ने पत्नी से कहा, 'पुन्नू के दिमाग में हर बात फितूर की तरह उठती है। ऐसा करो, तुम एक हफ्ते की छुट्टी ले कर राजकोट हो आओ। लड़की भी देख लेना और पुन्नू को भी टटोल लेना। शादी कोई चार दिनों का खेल नहीं, हमेशा का रिश्ता है। इंटर से ले कर अब तक दर्जनों दोस्त रही हैं पुन्नू की, ऐसा चटपट फैसला तो उसने कभी नहीं किया ।'

'तुम भी चलो, मैं अकेली क्या कर लूँगी।'

'मैं कैसे जा सकता हूँ। फिर पुन्नू सबसे ज्यादा तुम्हें मानता है, तुम हो आओ।'

8रास्ते भर रेखा को लगता रहा कि जब वह राजकोट पहुँचेगी पवन ताली बजाते हुए कहेगा, 'माँ, मैंने यह मजाक इसीलिए किया था कि तुम दौड़ी आओ। वैसे तो तुम आती नहीं।'

उसने अपने आने की खबर बेटे को नहीं की थी। मन में उसे विस्मित करने का उत्साह था। साथ ही यह भी कि उसे परेशान न होना पड़े। अहमदाबाद से राजकोट की बस यात्रा उसे भारी पड़ी। तेज रफ्तार के बावजूद तीन घंटे सहज ही लग गए। डायरी में लिखे पते पर जब वह स्कूटर से पहुँची छह बज चुके थे। पवन तभी ऑफिस से लौटा था। अनुपम भी उसके साथ था। उसे देख पवन खुशी से बावला हो उठा। बाँहों में उठा कर उसने माँ को पूरे घर में नचा दिया। अनुपम ने जल्दी से खूब मीठी चाय बनाई। थोड़ी देर में स्टैला वहाँ आ पहुँची।

पवन ने उनका परिचय कराया। स्टैला ने हैलो किया। पवन ने कहा, 'माँ, स्टैला मेरी बिजनेस पार्टनर, लाइफ पार्टनर, रूम पार्टनर तीनों है।'

अनुपम बोला, 'हाँ, अब जी.जी.जी.एल. चाहे चूल्हे भाड़ में जाए। तुम तो इंटरप्राइज के स्लीपिंग पार्टनर बन गए।'

स्टैला ने कहा, 'पवन डार्लिंग, जितने दिन मैम यहाँ पर हैं मैं मिसेज छजनानी के यहाँ सोऊँगी।'

स्टैला रात के खाने का प्रबंध करने रसोई में चली गई। फिर पवन उसे छोड़ने मिसेज छजनानी के घर चला गया। पवन को कुछ-कुछ अंदाजा था कि माँ से एकल वार्तालाप कोई आसान काम नहीं होगा। उसने अनुपम को मध्यस्थ की तरह साथ बिठाए रखा।

बारह बजे अनुपम का धैर्य समाप्त हो गया। उसने कहा, 'भाई मैं सोने जा रहा हूँ। सुबह ऑफिस भी जाना है।'

कमरे में अकेले होते ही रेखा ने कहा, 'पुन्नू यह सिलबिल-सी लड़की तुझे कहाँ मिल गई?'

पवन ने कहा, 'तुम्हें तो हर लड़की सिलबिल नजर आती है। इसका लाखों का कारोबार है।'

'पर लगती तो दो कौड़ी की है। यह तो बिलकुल तुम्हारे लायक नहीं।'

'यही बात तुम्हारे बारे में दादी माँ ने पापा से कही थी। क्या उन्होंने दादी माँ की बात मानी थी, बताइए।'

रेखा का सर्वांग संताप से जल उठा। उसका अपना बेटा, अभी कल की इस छोकरी की तुलना अपनी माँ से कर रहा है और उन सब जानकारियों का दुरुपयोग कर रहा है जो घर का लड़का होने के नाते उसके पास हैं।

'मैंने तो ऐसी कोई लड़की नहीं देखी जो शादी के पहले ही पति के घर में रहने लगे।'

'तुमने देखा क्या है माँ? कभी इलाहाबाद से निकलो तो देखोगी न। यहाँ गुजरात, सौराष्ट्र में शादी तय होने के पहले लड़की महीने भर ससुराल में रहती है। लड़का-लड़की एक-दूसरे के तौर-तरीके समझने के बाद ही शादी करते हैं।'

'पर यह ससुराल कहाँ है?'

'माँ, स्टैला अपना कारोबार छोड़ कर तुम्हारे क़स्बे में तो जाने से रही। उसका एक-एक दिन कीमती है।'

रेखा भड़क गई, 'अभी तो यह भी तय नहीं है कि हम इस रिश्ते के पक्ष में हैं या नहीं। हमारी राय का तुम्हारे लिए कोई अर्थ है या नहीं।'

'बिलकुल है तभी तो तुम्हें खबर की, नहीं तो अब तक हमने स्वामी जी के आश्रम में जा कर शादी कर ली होती।'

बिलकुल गलत बात कर रहे हो पुन्नू, यही सब सुनाने के लिए बुलाया है मुझे।'

'अपने आप आई हो। बिना खबर दिए। तुम्हारे इरादे भी संदिग्ध थे। तुम्हें मेरा टाइम टेबल पूछ लेना चाहिए था। मान लो मैं बाहर होता।'

रेखा को रोना आ गया। पवन पर अप्रिय यथार्थ का दौरा पड़ा ता जिसके अंतर्गत उसने अपनी शिकायतों के शरशूल से उसे लथपथ कर दिया।

'मैं सुबह वापस चली जाऊँगी, कोई ढंग की गाड़ी नहीं होगी तो मालगाड़ी में चली जाऊँगी पर अब एक मिनट तेरे पास नहीं रहूँगी।'

पवन की सख्ती का संदूक टूट गया। उसने माँ को अँकवार में भरा, 'माँ, कैसी बातें करती हो। तुम पहली बार मेरे पास आई हो, मैं तुम्हें जाने दूँगा भला। गाड़ी के आगे लेट जाऊँगा।'

दोनों रोते रहे। पवन के आँसू रेखा कभी झेल नहीं पाई। चौबीस साल को होने पर भी उसके चेहरे पर इतनी मासूमियत थी कि हँसते और रोते समय शिशु लगता था। संप्रेषण के इन क्षणों में माँ बेटा बन गई और बेटा माँ। पवन ने माँ के आँसू पोंछे, पानी पिलाया और थपक-थपक कर शांत किया उसे।

सुबह तेज संगीत की ध्वनि से रेखा की नींद टूटी। एक क्षण को वह भूल गई कि वह कहाँ है। 'हो रामजी मेरा पिया घर आया' सी.डी. सिस्टम पर पूरे वाल्यूम पर चल रहा था और अनुपम रसोई में चाय बना रहा था। उसने एक कप चाय रेखा को दी, 'गुड मार्निंग।' फिर उसने संगीत का वाल्यूम थोड़ा कम किया, 'सॉरी, सुबह मुझे खूब जोर जोर से गाना सुनना अच्छा लगता है। और फिर पवन भैया को उठाने का और कोई तरीका भी तो नहीं। आँटी से सवेरे पौने नौ तक सोते रहते हैं और नौ बजे अपने ऑफिस में होते हैं।'

'सुबह चाय नाश्ता कुछ नहीं लेता?'

'किसी दिन स्टैला भाभी हमारे लिए टोस्ट और कांप्लान तैयार कर देती हैं। पर ज्यादातर तो ऐसे ही भागते हैं हम लोग। लंच टाइम तक पेट में नगाड़े बजने लगते हैं।'

चावल में कंकड़ की तरह रड़क गया फिर स्टैला का नाम। कहाँ से लग गई यह बला मेरे भोले-भाले बेटे के पीछे, रेखा ने उदासी से सोचा।

'हटो आज मैं बनाती हूँ नाश्ता।'

रसोई की पड़ताल करने पर पाया गया कि टोस्ट और मिल्क शेक के सिवा कुछ भी बनना मुमकिन नहीं है। थोड़े-से बर्तन थे, जो जूठे पड़े थे।

'अभी भरत आ कर करेगा। आंटी आप परेशान मत होइएगा। भरत खाना बना लेता है।'

'पवन तो बाहर खाता था |'

'आंटी, हम लोग का टाइम गड़बड़ हो जाता था। मौसी लोग के यहाँ टाइम की पाबंदी बहुत थी। हफ्ते में दो एक दिन भूखा रहना पड़ता था। कई बार हम लोग टूर पर रहते हैं। तब भी पूरे पैसे देने पड़ते थे मौसी को। अब तीनों का लंच बॉक्स भरत पैक कर देता है।'

तभी भरत आ गया। पवन की पुरानी जींस और टी शर्ट पहने हुए यह बीस-बाईस साल का लड़का था जिसने सिर पर पटका बाँध रखा था। अनुपम के बताने पर उसने नमस्ते करते हुए कहा, 'पौन भाई नी बा आवी छे।' (पवन भाई की माँ आई हैं।)

गजब की फुर्ती थी उसमें। कुल पौन घंटे में उसने काम सँभाल लिया। रोटी बनाने के पहले वह रेखा के पास आ कर बोला, 'बा तमे केटला रोटली खातो?' (माँ, तुम कितनी रोटी खाती हो?)

यह सीधा-सा वाक्य था पर रेखा के मन पर ढेले की तरह पड़ा। अब बेटे के घर में उसकी रोटियों की गिनती होगी। उसने जलभुन कर कहा, 'डेढ़।'

'वे (दो) चलेगा ।' कह कर भरत फिर रसोई में चला गया। इस बीच पवन नहा कर बाहर निकला।

रेखा से रहा नहीं गया। उसने पवन को बताया। पवन हँसने लगा, 'अरे माँ, तुम तो पागल हो। भरत को हमीं लोगों ने कह रखा है कि खाना बिलकुल बरबाद न जाए। नाप-तोल कर बनाए। उसे हरेक का अंदाजा है कौन कितना खाता है। घर खुला पड़ा है, तुम जो चाहो बना लेना।'

रेखा को लगा इस नाप-तोल के पीछे जरूर स्टैला का हाथ होगा। उसका बेटा तो ऐसा हिसाबी कभी नहीं था। खुद यह जम कर बरबाद करने में यकीन करता था। एक बार नाश्ता बनता, दो बार बनता। पवन को पसंद न आता। शहजादे की तरह फरमा देता, 'आलू का टोस्ट नहीं खाएँगे, आमलेट बनाओ।' अब आमलेट तैयार होता वह दाँत साफ करने बाथरूम में घुस जाता। देर लगा कर बाहर निकलता। फिर नाश्ता देखते ही भड़क जाता, 'यह अंडे की

ठंडी लाश कोई खा सकता है? मालती पराठा बनाओ नहीं तो हम अभी जा रहे हैं बाहर।' घर की पुरानी सेविका मालती में ही इतना धीरज था कि रेखा की गैरमौजूदगी में पवन के नखरे पूरे करे। कभी बिना किसी सूचना के तीन-तीन दोस्त साथ ले आता। सारा घर उनके आतिथ्य में जुट जाता।

पवन ने कहा, 'भरत, मेरा लंच पैक मत करना, दुपहर में मैं घर आ जाऊँगा।' फिर रेखा से कहा, 'माँ क्या करूँ, ऑफिस जाना जरूरी है, देखो कल की छुट्टी का जुगाड़ करता हूँ कुछ। तुम पीछे से टी.वी. देखना, सी.डी. सुन लेना। कोई दिक्कत हो तो मुझे फोन कर लेना। सामने पटेल आँटी रहती है, कोई जरूरत हो तो उनसे बात कर लेना।' तभी स्टैला फूलों का गुलदस्ता लिए आई।

'गुड मॉर्निंग, मैम।' उसने गुलदस्ता रेखा को दिया। उसमें छोटा-सा गिफ्ट कार्ड लगा था, 'स्टैला पवन की ओर से।'

फूलों के बजाय रेखा ध्यान से उस चिट को देखती रही। पवन ताड़ गया। उसने कहा, 'माँ यह हम दोनों की तरफ से है।' उसने गिफ्ट कार्ड में पेन से स्टैला और पवन के बीच कॉमा लगा दिया।

रेखा को थोड़ी आश्वस्ति हुई। उसने देखा स्टैला की मुख मुद्रा थोड़ी बदली।

स्टैला ने अपना लंच बाक्स और ऑफिस बैग उठाया, 'बाय, सी यू इन द इविनिंग मैम, टेक केयर।'

उसी के पीछे-पीछे पवन, अनुपम भी गाड़ी की चाभी ले कर निकल गए।

अकेले घर में बिस्तर पर पड़ी-पड़ी रेखा देर तक विचारमग्न रही। बीच में इच्छा हुई कि राकेश से बात करे पर एस.टी.डी. कोड डायल करने पर उधर से आवाज आई, 'यह सुविधा तमारे फोन पर नथी छे।' फोन की एस.टी.डी. सुविधा पर इलेक्ट्रानिक ताला था। एक बार फिर रेखा को लगा इस घर पर स्टैला का नियंत्रण बहुत गहरा है।

रेखा के तीन दिन के प्रवास में स्टैला सुबह शाम कोई न कोई उपहार उसके लिए ले कर आती। एक शाम वह उसके लिए आभला (शीशे) की कढ़ाई की भव्य चादर ले कर आई। पवन ने कहा, 'जैसे पीर शाह पर चादर चढ़ाते हैं वैसे हम तुम्हें मनाने को चादर चढ़ा रहे हैं, माँ।'

'पीर औलिया की मजार पर चादर चढ़ाते है, मुझे क्या मुर्दा मान रहे हो?'

'नहीं माँ मुर्दा तो उन्हें भी नहीं माना जाता। तुम हर अच्छी बात का बुरा अर्थ कहाँ से ढूँढ़ लाती हो।'

'पर तुम खुद सोचो। कहीं काँच की चादर बिस्तर पर बिछाई जाती है। काँच पीठ में नहीं चुभ जाएँगे।'

9स्टैला ने उन दोनों का संवाद सुना। उसने पवन के जानू पर हाथ मारा, 'आइ गॉट इट। मैम इसे वॉल हैगिंग की तरह दीवार पर लटका लें। पूरी दीवार कवर हो जाएगी।'

पवन ने सराहना से उसे देखा, 'तुम जीनियस हो, सिली।'

चादर प्लास्टिक बैग में डाल कर रेखा के सूटकेस के ऊपर रख दी गई।

रेखा को रात में यही सपना बार-बार आता रहा कि उसके बिस्तर पर शीशेवाली चादर बिछी है। जिस करवट वह लेटती है उसके बदन में शीशे चट-चट कर टूट कर चुभ रहे हैं।

उसने सुबह पवन से बताया कि वह चादर नहीं ले जाएगी। पवन उखड़ गया, 'आपको पता है हमारे तीन हजार गिफ्ट पर खर्च हुए हैं। इतनी कीमती चीज की कोई कद्र नहीं आपको?'

रेखा को लगा अगर इस वक्त वह तीन हजार साथ लाई होती तो मुँह पर मारती स्टैला के। प्रकट उसने कहा, 'पुन्नू, उस लड़की से कहना विल बना कर रख ले हर चीज का, मैं वहाँ जा कर पैसे भिजवा दूँगी।'

'आप कभी समझने की कोशिश नहीं करोगी। वह जो भी कर रही है, मेरी मर्जी से, मेरी माँ के लिए कर रही है। अब देखो वह आपके लिए राजधानी एक्सप्रेस का टिकट लाई है, यहाँ से अमदाबाद वह अपनी एस्टीम में खुद आपको ले जाएगी। और क्या करे वह, सती हो जाए।'

'सती और सावित्री के गुण तो उसमें दिख नहीं रहे, अच्छी कैरियरिस्ट भले ही हो।'

'वह भी जरूरी है, बल्कि माँ वह ज्यादा जरूरी है। तुम तो अपने आपको थोड़ा-बहुत लेखक भी समझती हो, इतनी दकियानूस कब से हो गई कि मेरे लिए चिराग ले कर सती सावित्री ढूँढ़ने निकल पड़ो। वी आर मेड फॉर इच अदर। हम अगले महीने शादी कर लेंगे।'

'इतनी जल्दी।'

'हमारे एजेंडा पर बहुत सारे काम हैं। शादी के लिए हम ज्यादा से ज्यादा चार दिन खाली रख सकते हैं।'

'क्या सिविल मैरिज करोगे?' रेखा ने हथियार डाल दिए।

स्वामी जी से पूछना होगा। उनका शिविर इस बार उनके मुख्य आश्रम, मनपक्कम में लगेगा।'

'कहाँ?'

'मद्रास से तीस पैंतीस मील दूर एक जगह है, माँ। मैं तो कहता हूँ आप वहाँ जा कर दस दिन रहो। आपकी बेचैनी, परेशानी, बेवजह चिढ़ने की आदत सब ठीक हो जाएगी।'

'मैं जैसी भी हूँ ठीक हूँ। कोई ठाली बैठी नहीं हूँ जो आश्रमों में जा कर रहूँ। नौकरी भी करनी है ।'

'छोटी-सी नौकरी है तुम्हारी छोड़ दो, चैन से जियो माँ।'

'इसी छोटी-सी नौकरी से मैंने बड़े-बड़े काम कर डाले पुन्नू, तू क्या जानता नहीं है?'

'पर आप में जीवन दर्शन की कमी है। स्टैला के माँ बाप को देखो। अपनी लड़की पर विश्वास करते हैं। उन्हें पता है वह जो भी करेगी, सोच समझ कर करेगी।'

तिलमिला गई रेखा। बेटियाँ पराई हो जाती है, यह तो उसने देखा था पर बेटे पराए हो जाएँ, वह भे शादी के पहले।

'यह तेरा अंतिम निर्णय है?'

'हाँ, माँ।स्वामी जे ने भी इस रिशते को ओ.के. कर दिया है।'

'अपने पापा को पूछा तक नहीं और सब तय कर लिया।'

'उनसे मैं फोन पर बात कर लूँगा। वैसे स्वामी जी सबके सुपर पापा है, वे सूच-समझ कर हामी भरते हैं। उन्होंने भी इस डील पर मुहर लगा दी।'

'डील का क्या मतलब है। तुम अभी शादी जैसे रिश्ते की गंभीरता नहीं जानते। शादी और व्यापार अलग-अलग चीजें है।'

'कोई भी नाम दो, इससे फर्क नहीं पड़ता। अगले महीने आप चौबीस को मद्रास पहुँचो। स्वामी जी की सालगिरह पर चौबीस जुलाई को बड़ा भारी जलसा होता है, कम से कम पचास शादियाँ कराते हैं स्वामी जी।'

'सामूहिक विवाह?'

हाँ। एक घंटे में सब काम पूरा हो जाता है।' शल्य क्रिया की तरह बेटे ने सब कुछ निर्धारित कर रखा था। पहले पुत्र को ले कर परिवार के अरमानों के लिए इसमें कोई गुंजाइश नहीं थीं।

माँ ने अंतिम दलील दी, 'तू खरमास में शादी करेगा। इसमें शादियाँ निषिद्ध होती हैं।' पवन ने पास आ कर माँ के कंधे को पकड़ा, 'माँ मेरी प्यारी माँ, यह मैं भी जानता हूँ और तुम भी कि हम लोग इन बातों में यकीन नहीं करते। सिली के साथ जब बंधन में बँध जाऊँ वही मेरे लिए मुबारक महीना है।'

आहत मन और सुन्न मस्तिष्क लिए रेखा लौट आई। पति और छोटे बेटे ने जो भी सवाल किए, उनका वह कोई सिलसिलेवार उत्तर नहीं दे पाई।

'मेरा पुन्नू इतना कैसे बदल गया।' वह क्रंदन करती रही।

पवन ने फोन पर माँ की सकुशल वापसी की खबर ली। सघन से ई-मेल पता लिया और दिया और अपने पापा से बात करता रहा, 'पापा, आप अपनी शादी याद करो और माँ को समझाने का प्रयत्न करो। मैं लड़की को डिच(धोखा) नहीं कर सकता।'

राकेश व्यथा के ऊपर विवेक का आवरण चढ़ाए बेटे की आवाज सुनते रहे। 'ठीक है', 'अच्छा हूँ' के अलावा उनके मुँह से कुछ नहीं निकला। उस दिन किसी ने खाना नहीं खाया गया। राकेश ने कहा, 'हमें यह भी सोचना चाहिए कि उस लड़की में जरूर ऐसी कोई खासियत होगी कि हमारा बेटा उसे चाहता है। तुमने देखा होगा।'

'मुझे लगा स्टैला बड़ी अच्छी व्यवस्थापक है। मुझे तो वह लड़की की बजाय मैनेजर ज्यादा लगा।' रेखा ने कहा।

'तो इसमें बुराई क्या है। पवन दफ्तर भले ही मैनेज कर ले घर में तो उसे हर वक्त एक मैनेजर चाहिए जो उसका ध्यान रखे। यहाँ यह काम तुम और सुग्गू करते थे।'

'पर शादी एकदम अलग बात होती है।'

'कोई अलग बात नहीं होती। लड़की काम से लगी है। तुम्हारे जाने पर लगातार तुमसे मिलती रही। अपनी गरिमा इसी में होती है कि बच्चों से टकराव की स्थिति न आने दें।'

'पर सब कुछ वही तय कर रही है, हमें सिर्फ सिर हिलाना है।'

'तो क्या बुराई है। तुम अपने को नारीवादी कहती हो। जब लड़की सारे इंतजाम में पहल करे तो तुम्हें बुरा लग रहा है ।'

'हम इस सारे प्लान में कहीं नहीं है। हमें तो पुन्नू ने उठा कर ताक पर रख दिया है, पिछले साल के गणेश लक्ष्मी की तरह।'

'सब यही करते हैं। क्या हमने ऐसा नहीं किया। मेरी माँ को भी ऐसा ही दुख हुआ था।'

रेखा भड़क उठी, 'तुम स्टैला की मुझसे तुलना कर रहे हो। मैंने तुम्हारे घर-परिवार की धूप-छाया जैसे काटी है, वह काटेगी वैसे। बस बैठे-बैठे कंप्यूटर जोड़ने के सिवा और क्या आता है उसे। एक टाइम खाना नौकर बनाता है। दूसरे टाइम बाहर से आता है। दूध तक गरम करने में दिलचस्पी नहीं है उसे।'

'मुझे लगता है तुम पूर्वाग्रह से ग्रसित हो। मेरा लड़का गलत चयन नहीं कर सकता।'

'अब तुम उसकी लय में बोल रहे हो।'

कई दिनों तक रेखा की उद्‌विग्नता बनी रही। उसने अपनी अध्यापक सखियों से सलाह की। जो भी घर आता, उसकी बेचैनी भाँप जाता। उसने पाया हर परिवार में एक न एक अनचाहा, मनचाहा विवाह हुआ है।

उसे अपने दिन याद आए। बिल्कुल ऐसी तड़प उठी होगी राकेश के माता-पिता के कलेजे में जब उनकी देखी सर्वांग सुंदरियों को ठुकरा कर उसने रेखा से विवाह को मन बनाया। उसके दोस्तों तक ने उसने कहा, 'तुम क्या एकदम पागल हो गए हो?' दरअसल वे दोनों एक दूसरे के विलोम थे। राकेश थे लंबे, तगड़े, सुंदर और हँसमुख, रेखा थी छोटी, दुबली, कमसूरत और कटखनी। बोलते वक्त वह भाषा को चाकू की तरह इस्तेमाल करती थी। उसके इसी तेवर ने राकेश को खींचा था। वह उसकी दो-चार कविताओं पर दिल दे बैठा। राकेश के हितैषियों का खयाल कि अव्वल तो यह शादी नहीं होगी और हो भी गई तो छह महीने में टूट जाएगी।

रेखा को याद आता गया। शादी के बाद के महीनों में वह लाख घर का काम, स्कूल की नौकरी, खर्च को बोझ सँभालती, माँ जी उसके प्रति अपनी तलखी नहीं त्यागतीं। अगर कभी पिता जी या राकेश उसकी किसी बात की तारीफ कर देते तो उस दिन उसकी शामत ही आ जाती। माँ जी की नजरों में रेखा चलती-फिरती चुनौती थी।

जी.जी.सी.एल. लगातार घाटे में चलते-चलते अब डूबने के कगार पर थी। कर्मचारियों की छँटनी शुरू हो गई थी। एम.बी.ए. पास लड़कों में इतना धैर्य नहीं था कि वे डूबते जहाज का मस्तूल सँभालते। सभी किसी न किसी विकल्प की खोज में थे।

पवन ने घर पर फोन कर सूचना दी कि उसका चयन बहुराष्ट्रीय कंपनी मैल में हो गया है। नई नौकरी में ज्वाइन करने से पूर्व उसके पास तीन सप्ताह का समय होगा। इसी समय वह घर आएगा और जी भर कर रहेगा।

अगले हफ्ते पवन ने कंप्यूटर पर निर्मित साफ सुथरा सुरुचिपूर्ण पत्र भेजा जिसमें उसकी शादी का निमंत्रण था। स्वामी जी के कार्यक्रम के अनुसार शादी दिल्ली में होनी थी। शहरों की दूरियाँ और अपरिचय उसके जीवन में महत्व नहीं रखती थीं। बेटे की योजनाओं पर स्तंभित होना जैसे जीवन का अंग बन गया था। अपने नाम के अनुरूप ही वह पवन वेग से सारी व्यवस्था कर रहा था।

इस बीच इतना समय अवश्य मिल गया था कि रेखा और राकेश अपने क्षोभ और असंतोष को संतुलन का रूप दे सके। जब दिल्ली में रामकृष्णपुरम में सरल मार्ग के शिबिर में उन्होंने दस हजार दर्शकों की भीड़ में सामूहिक विवाह का दृश्य देखा तो उन्हें महसूस हुआ कि इस आयोजन में पारंपारिक विवाह संस्कार से कहीं ज्यादा गरिमा और विश्वसनीयता है। न कहीं माता-पिता की महाजनी भूमिका थी न नाटकीयता। स्वामी जी की उपस्थिति में वधू को एक सादा मंगलसूत्र पहनाया गया, फिर विवाह को नोटरी द्वारा रजिस्टर किया गया। अंत में सभी दर्शकों के बीच लड्डू बाँट दिए गए। कन्याओं के अभिभावकों के चेहरे पर कृतज्ञता का आलोक था। लड़कों के अभिभावकों के चेहरे कुछ बुझे हुए थे।

अब तक अपने आक्रोश पर रेखा और राकेश नियंत्रण कर चुके थे। नए अनुभव से गुजरने की उत्तेजना में उन्हें स्टैला से कोई शिकायत नहीं हुई। वे पवन और बहू को ले कर घर आए। दो दिन सलवार सूट पहनने के बाद स्टैला ने कह दिया, 'मैं दुपट्टा नहीं सँभाल सकती।' वह वापस अपनी प्रिय पोशाक जीन्स और टॉप में नजर आई। उसकी व्यस्तता भी इस तरह की थी कि लिबास को ले कर विवाद नहीं किया जा सकता था। उसने यहाँ अपनी सहयोगी फर्म से संपर्क कर सघन को कंप्यूटर के पार्ट्स दिला दिए। सघन ने सगर्व घोषणा की, 'मेरी जैसी भाभी कभी किसी को न मिली है न मिलेगी।' स्टैला कंप्यूटर मैन्यू पर जितनी पारंगत थी, रसोई घर की मैन्यू पर उतनी ही अनाड़ी। लगातार घर से बाहर होस्टलों में रहने की वजह से उसके जेहन में खाने का कोई खास तसव्वुर नहीं था। वह अंडा आलू, चावल उबालना जानती थी या फिर मैगी।

माँ ने कहा, 'इतनी बेस्वाद चीजें तुम खा सकती हो?'

स्टैला ने कहा, 'मैं तो बस कैलोरी गिन लेती हूँ और आँख मूँद कर खाना निगल लेती हूँ।'

'पर हो सकता है पवन स्वादिष्ट खाना खाना चाहे।'

'तो वह कुकिंग सीख ले। वैसे भी वह अब चेन्नई जानेवाला है। मैं राजकोट और अहमदाबाद के बीच चलती-फिरती रहूँगी।'

'फिर भी मैं तुम्हें थोड़ा-बहुत सिखा दूँ।'

अब पवन ने हस्तक्षेप किया। वह यहाँ माता-पिता का आशीर्वाद लेने आया था, उपदेश नहीं।

'माँ, जब से मैंने होश सँभाला, तुम्हें स्कूल और रसोई के बीच दौड़ते ही देखा। मुझे याद है जब मैं सो कर उठता तुम रसोई में होतीं और जब मैं सोने जाता, तब भी तुम रसोई में होतीं। तुम्हें चाहिए कि स्टैला के लिए जीवन भट्ठी न

बने। जो तुमने सहा, वह क्यों सहे।?'

रेखा की मुखाकृति तन गई। हालाँकि बेटे के तर्क की वह कायल थी।

दोपहर में लेटे उसे लगा हर पीढ़ी का प्यार करने का ढंग अलग और अनोखा होता है। स्टैला भले ही कंप्यूटर पर आठ घंटे काम कर ले, रसोई में आध घंटे नहीं रहना चाहती। पवन भी नहीं चाहता कि वह रसोई में जाए। रेखा ने कहा, 'यह दाल-रोटी तो बनानी सीख ले।' पवन ने जवाब दिया खाना बनानेवाला पाँच सौ रुपए में मिल जाएगा माँ, इसे बावर्ची थोड़ी बनाना है।'

'और मैं जो सारी उमर तुम लोगों की बावर्ची, धोबिन, जमादारनी बनी रही वह?'

'गलत किया आपने और पापा ने। आप चाहती हैं वही गलतियाँ मैं भी करूँ। जो गुण है इस लड़की के उन्हें देखो। कंप्यूटर विजर्ड है यह। इसके पास बिल गेट्स के हस्ताक्षर से चिट्ठी आती है।'

'पर कुछ स्त्रियोचित गुण भी तो पैदा करने होंगे इसे।'

'अरे माँ, आज के जमाने में स्त्री और पुरुष का उचित अलग-अलग नहीं रहा है। आप तो पढ़ी- लिखी हो, माँ। समय की दस्तक पहचानों। इक्कीसवीं सदी में ये सड़े-गले विचार ले कर नहीं चलना है हमें, इनका तर्पण कर डालो।'

स्टैला की आदत थी जब माँ बेटे में कोई प्रतिवाद हो तो वह बिल्कुल हस्तक्षेप नहीं करती थी। उसकी ज्यादा दिलचस्पी समस्याओं के ठोस निदान में थी। उसने पिता से कहा, 'मैं आपको ऑपरेट करना सिखा दूँगी। तब आप देखिएगा संपादन करना आपके लिए कितना सरल काम होगा। जहाँ मर्जी संशोधन कर लें जहाँ मर्जी मिटा दें।'

रेखा की कई कहानियाँ उसने कंप्यूटर पर उतार दीं। बताया, 'मैम इस एक फ्लॉपी में आपकी सौ कहानियाँ आ सकती हैं। बस यह डिस्कैट सँभाल लीजिए, आपका सारा साहित्य इसमें है।'

चमत्कृत रह गए वे दोनों। रेखा ने कहा, 'अब तुम हमारी हो गई हो। मैम न बोला करो।'

'ओ.के. माम सही।' स्टैला हँस दी।

बच्चों के वापस जाने में बहुत थोड़े दिन बचे थे। राकेश इस बात से उखड़े हुए थे कि शादी के तत्काल बाद पवन और स्टैला साथ नहीं रहेंगे बल्कि एक-दूसरे से तीन हजार मील के फासले पर होंगे।

उन्होंने दोनों को समझाने की कोशिश की। पवन ने कहा, 'मैं तो वचन दे चुका हूँ मैल को। मेरा चेन्नई जाना तय है।'

'और जो वचन जीवन साथी को दिए वे?'

पवन हँसा, 'पापा, जुमलेबाजे में आपका जवाब नहीं। हमारी शादी में कोई भारी-भरकम वचनों की अदला बदली नहीं हुई।'

'बहू अकेली अनजान शहर में रहेगी? आजकल समय अच्छा नहीं है।'

'समय कभी भी अच्छा नहीं था, पापा, मैं तो पच्चीस साल से देख रहा हूँ। फिर वह शहर स्टैला के लिए अनजान नहीं है। एक और बात, राजकोट में हिंसा, अपराध यहाँ का एक परसेंट भी नहीं है। रातों में लोग बिना ताला लगाए स्कूटर पार्क कर देते हैं, चोरी नहीं होती। फिर आपकी बहू कराटे, ताइक्वांडो में माहिर है।'

'पर फिर भी शादी के बाद तुम्हारा फर्ज है साथ रहो।'

'पापा, आप भारी-भरकम शब्दों से हमारा रिश्ता बोझिल बना रहे हैं। मैं अपना कैरियर, अपनी आजादी कभी नहीं छोड़ूँगा। स्टैला चाहे तो अपना बिजनेस चेन्नई ले चले।'

'तुम तो तरक्कीराम हो। मैं चेन्नई पहुँचूँ और तुम सिंगापुर चले जाओ तब !' स्टैला हँसी।

पता चला पवन के सिंगापुर या ताईवान जाने की भी बात चल रही थी।

रेखा ने कहा, 'यह बार-बार अपने को डिस्टर्ब क्यों करती हो। अच्छी-भली कट रही है सौराष्ट्र में। अब फिर एक नई जगह जा कर संघर्ष करोगे?'

'वही तो माँ। मंजिलों के लिए संघर्ष तो करना ही पड़ेगा। मेरी लाइन में चलते रहना ही तरक्की है। अगर यहीं पड़ा रह गया तो लोग कहेंगे, देखा कैसा लद्धड़ है, कंपनी डूब रही है और यह कैसा बियांका की तरह उसमें फँसा हुआ है।'

बातें राकेश को बहुत चुभीं, 'तुम अपनी तरक्की के लिए पत्नी और कंपनी दोनों छोड़ दोगे?'

'छोड़ कहाँ रहा हूँ, पापा, यह कंपनी अब मेरे लायक नहीं रही। मेरी प्रतिभा का इस्तेमाल अब 'मैल' करेगी। रही स्टैला। तो यह इतनी व्यस्त रहती है कि इंटरनेट और फोन पर मुझसे बात करने की फुर्सत निकाल ले यही बहुत है। फिर जेट, सहारा, इंडियन एयरलाइंस का बिजनेस आप लोग चलने दोगे या नहीं। सिर्फ सात घंटे की उड़ान से हम लोग मिल सकते हैं।'

'यानी सेटेलाइट और इंटरनेट से तुम लोगों का दांपत्य चलेगा?'

'येस पापा ।'

'मैं तुम्हारी प्लानिंग से जरा भी खुश नहीं हूँ, पुन्नू। एक अच्छी-भली लड़की को अपना जीवन साथी बना कर कुछ जिम्मेदारी से जीना सीखो। और बेचारी जी.सी.सी.एल. ने तुम्हें इतने वर्षों में काम सिखा कर काबिल बनाया है। कल तक तुम इसके गुण गाते नहीं थकते थे। तुम्हारी एथिक्स को क्या होता जा रहा है?'

पवन चिढ़ गया, 'मेरे हर काम में आप यह क्या एथिक्स, मोरैलिटी जैसे भारी-भरकम पत्थर मारते रहते है। मैं जिस दुनिया में हूँ वहाँ एथिक्स नहीं, प्रोफेशनल एथिक्स का जरूरत है। चीजों को नई नजर से देखना सीखिए नहीं तो आप पुराने अखबार की तरह रद्दी की टोकरी में फेंक दिए जाएँगे। आप जेनरेशन गैप पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं। इससे क्या होगा, आप ही दुखी रहेंगे।'

'तुम हमारी पीढ़ी में पैदा हुए हो, बड़े हुए हो, फिर जेनरेशन गैप कहाँ से आ गया। असल में पवन हम और तुम साथ बड़े हुए हैं।'

'ऐसा आपको लगता है। आपको आज भी के. एल. सहगल पसंद है, मुझे बाबा सहगल, इतना फासला है हमारे आपके बीच। आपको पुरानी चीजें, पुराने गीत, पुरानी फिल्में सब अच्छी लगती हैं। ढूँढ़-ढूँढ़ कर आप कबाड़ इकट्ठा करते हैं। टी.वी. पर कोई पुरानी फिल्म आए आप उससे बँध जाते हैं। इतना फिल्म बोर नहीं करती जितना आपकी यादें बोर करती हैं— निम्मी ऐसे देखती थी, ऐसे भागती थी, उसके होठ अनकिस्ड लिप्स कहलाते थे। मेरे पास इन किस्से कहानियों का वक्त नहीं है। तकनीकी दृष्टि से कितनी खराब फिल्में थीं वे। एक डायलाग बोलने में हीरोइन दो मिनट लगा देती थी। आप भी तो आधी फिल्म देखते न देखते ऊँघ जाते हैं।'

रेखा ने कहा, 'बाप को इतना लंबा लेक्चर पिला दिया। यह नहीं देखा कि तेरे सुख की ही सोच रहे हैं वे।'

'जब मैं यहाँ सुख से रहता था तब भी तो आप लोग दुखी थे। आपने कहा था माँ कि आपके बड़े बाबू के लड़के तक ने एम.बी.ए. प्रवेश पास कर ली। उस समय मुझे कैसा लगा था।'

'सभी माँ बाप अपने बच्चों को भौतिक अर्थों में कामयाब बनाना चाहते हैं ताकि कोई उन्हें फिसड्डी न समझे।'

'वही तो मैंने किया। आपके ऊपर इन तीन अक्षरों का कैसा जादू चढ़ा था, एम.बी.ए.। आपको उस वक्त लगा था कि अगर आपके लड़के ने एम.बी.ए. नहीं किया तो आपकी नाक कट जाएगी।'

'हमें तुम्हारी डिग्री पर गर्व है, बेटा, पर शादी के साथ कुछ तालमेल भी बैठाने पड़ते हैं।'

'तालमेल बड़ा गड़बड़ शब्द है। इसके लिए न मैं स्टैला की बाधा बनूँगा न वह मेरी। हमने पहले ही यह बात साफ कर ली है।'

'पर अकेलापन. . .'

'यह अकेलापन तो आप सब के बीच रह कर भी मुझे हो रहा है। आप मेरे नजरिए से चीजों को देखना नहीं चाहते। आपने मुझे ऐसे समुद्र में फेंक दिया है जहाँ मुझे तैरना ही तैरना है।'

'तुम पढ़-लिख लिए, यह गलती भी हमारी थी क्यों?'

'पढ़ तो मैं यहाँ भी रहा था पर आप सपने पूरे करना चाहते थे। आपके सपने मेरा संघर्ष बन गए। यह मत सोचिए कि संघर्ष अकेले आता है। वह सबक भी सिखाता चलता है।'

राकेश निरुत्तर हो गए। उन्हें लगा जितना अपरिपक्व वह बेटे को मान रहे हैं, उतना वह नहीं है।

स्टैला का रेल आरक्षण दो दिन पहले का था। उसके जाने के बाद पवन का सामान समेटना शुरू हुआ। उसने छोटे से 'ओडिसी' सूटकेस में करीने से अपने कपड़े जमा लिए। बैग में निहायत जरूरी चीजों के साथ लैपटॉप, मिनरल वॉटर और मोबाइल फोन रख लिया।

जाने के दिन उसने माँ के नाम बीस हजार का चेक काटा, 'माँ, हमारे आने से आपका बहुत खर्च हुआ है, यह मैं आपको पहली किस्त दे रहा हूँ। वेतन मिलने पर और दूँगा।'

रेखा का गला रूँध गया, 'बेटे, हमें तुमसे किस्तें नहीं चाहिए। जो कुछ हमारा है सब तुम्हारा और छोटू का है। यह मकान तुम दोनों आधा-आधा बाँट लेना। और जो भी है उसमें बराबर का हिस्सा है।'

'अब बताओ, हिसाब की बात तुम कर रही हो या मैं? इतने साल की नौकरी में मैंने कभी एक पैसा आप दोनों पर खर्च नहीं किया।'

रेखा ने चेक वापस करते हुए कहा, 'रख लो नई जगह पर काम आएगा। दो शहरों में गृहस्थी जमाओगे, दोहरा खर्च भी होगा।'

'सोच लो माँ, लास्ट ऑफर। फिर न कहना पवन ने घर पर उधार चढ़ा दिया।'

बच्चों के जाने के बाद घर एकबारगी भायँ-भायँ करने लगा। सघन ने सॉफ्टवेयर की प्रवेश परीक्षा उत्तीर्ण कर दिल्ली में डेढ़ साल का कोर्स ज्वायन कर लिया। रेखा और राकेश एक बार फिर अकेले रह गए।

अकेलेपन के साथ सबसे जानलेवा होते हैं उदासी और पराजय बोध ! वे दोनों सुबह की सैर पर जाते। इंजीनियरिंग कालेज के अहाते की साफ हवा कुछ देर को चित्त प्रफुल्लित करती कि कॉलोनी का कोई न कोई परिचित दिख जाता। बात स्वास्थ्य और मौसम से होती हुई अनिवार्यतः बच्चों पर आ जाती। कालेज की रेलिंग पर गठिया से गठियाए पैरों को तनिक आराम देते सिन्हा साहब बताते, उनका अमित मुंबई में है, वहीं उसने किस्तों पर फ्लैट खरीद लिया है। सोनी साहब बताते, उनका बेटा एच.सी.एल. की ओर से न्यूयार्क चला गया है। मजीठिया का छोटा भाई कैनेडा में हार्डवेयर का कोर्स करने गया था, वहीं बस गया है।

ये सब कामयाब संतानों के माँ-बाप थे। हर एक के चेहरे पर भय और आशंका के साए थे। बच्चों की सफलता इनके जीवन में सन्नाटा बुन रही थी।

'इतनी दूर चला गया है बेटा, पता नहीं हमारी क्रिया करने भी पहुँचेगा या नहीं?' सोनी साहब कह कर चुप हो जाते।

रेखा और राकेश इन सब से हट कर घूमने का अभ्यास करते। उन्हें लगता जो बेचैनी वे रात भर जीते हैं उसे सुबह-सुबह शब्दों का जामा पहना डालना इतना जरूरी तो नहीं। यों दिन भर बात में छोटू और पवन का ध्यान आता रहता। घर में पाव भर सब्जी भी न खपती। माँ कहती, 'लो छोटू के नाम की बची है यह। पता नहीं क्या खाया होगा उसने?'

राकेश को पवन का ध्यान आ जाता, 'उसके जॉब में दौरा ही दौरा है। इतना बड़ा एरिया उसे दे दिया है क्या खाता होगा। वहाँ सब चावल के व्यंजन मिलते हैं, मेरी तरह उसे भी चावल बिल्कुल पसंद नहीं।'

दोनों के कान फोन पर लगे रहते। फोन अब उनके लिए कोने में रखा एक यंत्र नहीं, संवादिया था। पवन जब अपने शहर में होता फोन कर लेता। अगर चार पाँच दिन उसका फोन न आए तो ये लोग उसका नंबर मिलाते। उस समय उन्हें छोटू की याद आती। फोन मिलाने, उठाने, एस.टी.डी. का इलेक्ट्रानिक ताला खोलने, लगाने का काम छोटू ही किया करता था। अब वे फोन मिलाते पर डरते-डरते। सही नंबर दबाने पर भी उन्हें लगता नंबर गलत लग गया है। कभी पवन फोन उठाता पर ज्यादातर उधर से यही यांत्रिक आवाज आती - 'यू हैव रीच्ड द वायस मेल बॉक्स ऑफ नंबर 9844014988।

रेखा को वायस मेल की आवाज बड़ी मनहूस लगती। वह अक्सर पवन से कहती, 'तुम खुद तो बाहर चले जाते हो, इस चुड़ैल को लगा जाते हो।'

'क्या करूँ माँ, मैं तो हफ्ता-हफ्ता बाहर रहता हूँ। लौट कर कम से कम यह तो पता चल जाता है कि कौन फोन घर पर आया।'

सघन के होस्टेल में फोन नहीं था। वह बाहर से महीने में दो बार फोन कर लेता। उसे हमेशा पैसों की तंगी सताती। महीने के शुरू में पैसे मिलते ही वह कंप्यूटर की महँगी पत्रिकाएँ खरीद लेता, फिर कभी नाश्ते में कटौती, कभी खाने में कंजूसी बरतता। दिल्ली इतनी महँगी थी कि बीस रुपए रोज आने-जाने में निकल जाते जबकि इसके बावजूद बस के लिए घंटों धूप में खड़ा होना पड़ता। एक सेमेस्टर पूरा कर जब वह घर आया माँ-पापा उसे पहचान नहीं पाए। चेहरे पर हड्डियों के कोण निकल आए थे। शकल पर से पहलेवाला छलकाता बचपना गायब हो गया था।

बैग और अटैची से उसके चीकट मैले कपड़े निकालते हुए रेखा ने कहा, 'क्यों कभी कपड़े धोते नहीं थे।'

उसने गर्दन हिला दी।

'क्यों?'

'टाइम कहाँ है माँ। रोज रात तीन बजे तक कंप्यूटर पर पढ़ना होता है। दिन में क्लास।'

'बाकी लड़के कैसे करते हैं?'

'लांड्री में धुलवाते हैं। मेरे पास पैसे नहीं होते।'

राकेश ने कहा, 'जितने तुम्हें भेजते हैं, उतने तो हम पवन को भी नहीं भेजते थे। एक तरह से तुम्हारी माँ का पूरा वेतन ही चला जाता है।'

'उस जमाने की बात पुरानी हो गई, पापा। अब तो अकेली चिप सौ रुपए की होती है।'

'क्या जरूरत है इतने चिप्स खाने की?' रेखा ने भौंहें सिकोड़ीं।

सघन हँस दिया, 'माँ, पोटेटो चिप्स नहीं, पढ़ने के चिप की बात करो। यह तो एक मैगजीन है, और न जाने कितनी हैं जो मैं अफोर्ड नहीं कर पाता। मेरे कोर्स की एक-एक सी.डी. की कीमत ढाई सौ रुपए होती है।'

नाश्ते के बाद वह बिना नहाए सो गया। उसकी मैली जींस रगड़ते हुए माँ सोचती रही, इसके कपड़ों से इसके संघर्ष का पता चल रहा है। जब तक वह घर पर था हमेशा साफ-सुथरा रहता था। दोपहर में उसे खाने के लिए उठाया। बड़ी मुश्किल से वह उठा, चार कौर खा कर फिर सो गया। तभी उसके पुराने दोस्त योगी का फोन आ गया। उसकी हार्ड डिस्क अटक रही थी। सघन ने कहा वह उसके यहाँ जा रहा है, मरम्मत कर देगा।

'तुम तो साफ्टवेयर प्रोग्रामिंग में हो।' राकेश ने कहा।

'वहाँ मैंने हार्डवेयर का भी ईवनिंग कोर्स ले रखा है।' सघन ने जाते-जाते कहा।

हम अपने बच्चों को कितना कम जानते हैं। उनके इरादे, उनका गंतव्य, उनका संघर्ष पथ सब एकांकी होता है। राकेश ने सोचा। उसकी स्मृति में वह अभी भी लीला दिखानेवाला छोटा-सा किशन कन्हैया था जबकि वह सूचना विज्ञान के ऐसे संसार में हाथ-पैर फटकार रहा था जिसके ओर-छोर समूचे विश्व में फैले थे।

रेखा ने कहा, 'जो मैं नहीं चाहती थी वह कर रहा है छोटू। हार्डवेयर का मतलब है मेकैनिक बन कर रह जाएगा। एक भाई मैनेजर दूसरा, मेकैनिक।'

राकेश ने डाँट दिया, 'जो बात नहीं समझती, उसे बोला मत करो। हार्डवेयरवालों को टेक्नीशियन कहते हैं, मेकैनिक नहीं। विदेश में सॉफ्टवेयर इंजीनियर से ज्यादा हार्डवेयर इंजीनियर कमाते हैं। तुम्हें याद है जब यह छोटा-सा था, तीन साल का, मैंने इसे एक रूसी किताब ला कर दी थी 'मैं क्या बनूँगा?' सचित्र थी वह।'

रेखा का मूड बदल गया, 'हाँ, मैं इसे पढ़ कर सुनाती थी तो यह बहुत खुश होता था। उसमें एक जगह लिखा था, मैकेनिक अपने हाथ-पैर कितने भी गंदे रखें उसकी माँ कभी नहीं मारती। इसे यह बात बड़ी अच्छी लगती। वह तस्वीर थी न, बच्चे के दोनों हाथ ग्रीज से लिथड़े हैं और माँ उसे खाना खिला रही है।'

'पर छोटू कमजोर बहुत हो गया है। कल से इसे विटामिन देना शुरू करो।'

'मुझे लगता है यह खाने-पीने के पैसे काट कर हार्डवेयर कोर्स की फीस भरता होगा। शुरू का चुप्पा है। अपनी जरूरतें बताता तो है ही नहीं।'

अभी सघन को सुबह-शाम दूध दलिया देना शुरू ही किया था कि हॉटमेल पर उसे ताइवान की सॉफ्टवेयर से नौकरी का बुलावा आ गया। फुर्र हो गई उसकी थकान और चुप्पी। कहने लगा, 'मुझे दस दिनों से इसका इंतजार था। सारे बैच ने एप्लाय किया था पर पोस्ट सिर्फ एक थी।'

माँ-बाप के चेहरे फक पड़ गए। एक लड़का इतनी दूर मद्रास में बैठा है। दूसरा चला जाएगा एक ऐसे परदेस जिसके बारे में वे स्पेलिंग से ज्यादा कुछ नहीं जानते।

राकेश कहना चाहते थे सघन से, 'कोई जरूरत नहीं इतनी दूर जाने की, तुम्हारे क्षेत्र में यहाँ भी नौकरी है।'

पर सघन सहमति भेज चुका था। पासपोर्ट उसने पिछले साल ही बनवा लिया था। वह कह रहा था, 'पापा, बस हवाई टिकट और पाँच हजार का इंतजाम आप कर दो, बाकी मैं मैनेज कर लूँगा। आपका खर्च मैं पहली पे में से चुका दूँगा।'

रेखा को लगा सघन में से पवन का चेहरा झाँक रहा है। वही महाजनी प्रस्ताव और प्रसंग। उसे यह भी लगा कि जवान बेटे ने एक मिनट को नहीं सोचा कि माता-पिता यहाँ किसके सहारे जिंदा रहेंगे।

अनिवासी और प्रवासी केवल पर्यटक और पंछी नहीं होते, बच्चे भी होते हैं। वे दौड़-दौड़ कर दर्जी के यहाँ से अपने नए सिले कपड़े लाते हैं, सूटकेस में अपना सामान और कागजात जमाते हैं, मनी बेल्ट में अपना पासपोर्ट, वीजा

और चंद डॉलर रख, रवाना हो जाते हैं अनजान देश प्रदेश के सफर पर, माता-पिता को सिर्फ स्टेशन पर हाथ हिलाते छोड़ कर।

प्लेटफॉर्म पर लड़खड़ाती रेखा को अपने थरथराते हाथ से सभालते हुए राकेश ने कहा, 'ठीक ही किया छोटू ने। जितनी तरक्की यहाँ दस साल में करता उतनी वह वहाँ दस महीनों में कर लेगा। जीनियस तो है ही।'

कॉलोनी के गुप्ता दंपति भी उनके साथ स्टेशन आए हुए थे। मिसेज गुप्ता ने कहा, 'वायरल फीवर की तरह विदेश वायरस भी बहुत फैला हुआ है आजकल।'

'खुद कुछ भी कह लो, हमारा छोटू ऐसा नहीं है। उसके विषय में यहाँ कुछ ज्यादा है ही नहीं। कह कर गया है कि ट्रिक्स ऑफ द ट्रेड सीखते ही मैं लौट आऊँगा। यही रह कर बिजनेस करूँगा ।'

'अजी राम कहो।' गुप्ता जी बोले, 'जब वहाँ के ऐश-ओ-आराम में रह लेगा तब लौटने की सोचेगा? यह मुल्क, यह शहर, यह घर सब जेल लगेगा जेल।'

'लेट्स होप फॉर द बेस्ट।' राकेश ने सबको चुप किया।

घर वही था, दर-ओ-दीवार वही थे, घऱ का सामान वही था, यहाँ तक कि रूटीन भी वही था पर पवन और सघन के माता-पिता को मानो वनवास मिल गया। अपने ही घर में वे आकुल पंछी की तरह कमरे-कमरे फड़फड़ाते डोलते। पहले दो दिन तो उन्हें बिस्तर पर लगता रहा जैसे कोई उन्हें हवा में उड़ाता हुआ ले जा रहा है। जब तक सघन का वहाँ से फोन नहीं आ गया, उनके पैरों की थरथराहट नहीं थमी।

छोटे बेटे के चले जाने से बड़े बेटे की अनुपस्थिति भी नए सिरे से खलने लगी। दिन भर की अवधि में छोटे-छोटे करिश्मे और कारनामे, बच्चों को पुकार कर दिखाने का मन करता, कभी पुस्तक में पढ़ा बढ़िया-सा वाक्य, कभी अखबार में छपा कोई मौलिक समाचार, कभी बगिया में खिला नया गुलाब, इस सब को बाँटने के लिए वे आपस में पूरे होते हुए भी आधे थे। राकेश सुबह उठते ही अपने छोटे से साप्ताहिक पत्र के संपादन में व्यस्त हो जाते, रेखा कुकर चढ़ाने के साथ कॉपियाँ भी जाँचती रहती पर घर भायँ-भायँ करता रहता। सुबह आठ बजे ही जैसे दोपहर हो जाती।

बच्चे घर के तंतु जाल में किस कदर समाए होते हैं, यह उनकी गैरमौजूदगी में ही पता चलता है। दफ्तर जाने के लिए राकेश स्कूटर निकालते। सुबह के समय स्कूटर को किक लगाना उन्हें नागवार लगता। वे पहली कोशिश करते कि उन्हें लगता सघन का पैर स्कूटर की किक पर रखा है। 'लाओ पापा, मैं स्टार्ट कर दूँ ।' चकित दृष्टि दाएँ बाएँ उठती फिर अड़ियल स्कूटर पर बेमन से ठहर जाती।

रसोई में ताक बहुत ऊँचे लगे थे। रेखा का कद सिर्फ पाँच फुट था। ऊपर के ताकों पर कई ऐसे सामान रखे थे जिनकी जरूरत रोज न पड़ती। पर पड़ती तो सही। रेखा एक पैर पट्टे पर उचक कर मर्तबान उतारने की कोशिश करती पर कामयाब न हो पाती। स्टूल पर चढ़ना फ्रेक्चर को खुला बुलावा देना था।

अंततः जब वह चिमटे या कलछी से कोई चीज उतारने को होती उसे लगता कहीं से आ कर दो परिचित हाथ मर्तबान उतार देंगे। रेखा बावली बन इधर उधर कमरों में बच्चे को टोहती पर कमरों की वीरानी में कोई तबदीली

न आती। कॉलोनी में कमोबेश सभी की यही हालत थी। इस बुड्ढा- बुड्ढी कॉलोनी में सिर्फ गर्मी की लंबी छुट्टियों में कुछ रौनक दिखाई देती जब परिवारों के नाती-पोते अंदर-बाहर दौड़ते-खेलते दिखाई देते। वरना यहाँ चहल-पहल के नाम पर सिर्फ सब्जीवालों के या रद्दी खरीदनेवाले कबाड़ियों के ठेले घूमते नजर आते। बच्चों को सुरक्षित भविष्य के लिए तैयार कर हर घर परिवार के माँ-बाप खुद एकदम असुरक्षित जीवन जी रहे थे।

शायद असुरक्षा के एहसास से लड़ने के लिए ही यहाँ की जनकल्याण समिति प्रति मंगलवार किसी एक घर में सुंदर कांड का पाठ आयोजित करती। उस दिन वहाँ जैसे बुढ़वा मंगल हो जाता। पाठ के नाम पर सुंदर कांड का कैसेट म्यूजिक सिस्टम में लगा दिया जाता। तब घर के साज ओर सामान पर चर्चाएँ होतीं।

डाइनिंग टेबिल पर माइक्रोवेव ओवन देख कर मिसेज गुप्त मिसेज मजीठिया से पूछतीं, 'यह कब लिया?'

मिसेज मजीठिया कहतीं, 'इस बार देवर आया था, वही दिला गया है।'

'आप क्या पकाती हैं इसमें?'

'कुछ नहीं, बस दलिया खिचड़ी गर्म कर लेते हैं। झट से गर्म हो जाता है।'

'अरे, यह इसका उपयोग नहीं है, कुछ केक-वेक बना कर खिलाइए।'

'बच्चे पास हों तो केक बनाने का मजा है।'

पता चला किसी के घर में वैक्यूम क्लीनर पड़ा धूल खा रहा है, किसी के यहाँ के यहाँ फूड प्रोसेसर। लंबे गृहस्थ जीवन में अपनी सारी उमंग खर्च कर चुकी ये सयानी महिलाएँ एकरसता का चलता-फिरता कूलता-कराहता दस्तावेज थीं। रेखा को इन मंगलवारीय बैठकों से दहशत होती। उसे लगता आनेवाले वर्षों में उसे इन जैसा हो जाना है।

उसका मन बार-बार बच्चों के बचपन और लड़कपन की यादों में उलझ जाता। घूम-फिर कर वही दिन याद आते जब पुन्नू छोटू धोती से लिपट-लिपट जाते थे। कई बार तो इन्हें स्कूल भी ले कर जाना पड़ता क्योंकि वे पल्लू छोड़ते ही नहीं। किसी सभा-समिति में उसे आमंत्रित किया जाता तब भी एक न एक बच्चा उसके साथ जरूर चिपक जाता। वह मजाक करती, 'महारानी लक्ष्मीबाई की पीठ पर बच्चा दिखाया जाता है, मेरा उँगली से बँधा हुआ।'

क्या दिन थे वे ! तब इनकी दुनिया की धुरी माँ थी, उसी में था इनका ब्रह्मांड और ब्रह्म। माँ की गोद इनका झूला, पालना और पलंग। माँ की दृष्टि इनका सृष्टि विस्तार। पवन की प्रारंभिक पढ़ाई में रेखा और राकेश दोनों ही बावले रहे थे। वे अपने स्कूटर पर उसकी स्कूल बस के पीछे-पीछे चलते जाते यह देखने कि बस कौन से रास्ते जाती है। स्कूल की झाड़ियों में छुप कर वे पवन को देखते कि कहीं वह रो तो नहीं रहा। वह शाहजादे की तरह रोज नया फरमान सुनाता। वे दौड़-दौड़ कर उसकी इच्छा पूरी करते। परीक्षा के दिनों में वे उसकी नींद सोते जागते।

रेखा के कलेजे में हूक-सी उठती, कितनी जल्दी गुजर गए वे दिन। अब तो दिन महीनों में बदल जाते हैं और महीने साल में, वह अपने बच्चों को भर नजर देख भी नहीं पाती। वैसे उसी ने तो उन्हें सारे सबक याद कराए थे। इसी

प्रक्रिया में बच्चों के अंदर तेजी, तेजस्विता और त्वरा विकसित हुई, प्रतिभा, पराक्रम और महत्वाकांक्षा के गुण आए। वही तो सिखाती थी उन्हें 'जीवन में हमेशा आगे ही आगे बढ़ो, कभी पीछे मुड़ कर मत देखो।' बच्चों को प्रेरित करने के लिए वह एक घटना बताती थी। पवन और सघन को यह किस्सा सुनने में बहुत मजा आता था। सघन उसकी धोती में लिपट कर तुतलाता, 'मम्मा, जब बैया जंतल मंतल पल चर गया तब का हुआ?' रेखा के सामने वह क्षण साकार हो उठता। पूरे आवेग से बताने लगती, 'पता है पुन्नू एक बार हम दिल्ली गए। तू ढाई साल का था। अच्छा भला मेरी उँगली पकड़े जंतर मंतर देख रहा था। इधर राकेश मुझे धूप घड़ी दिखाने लगे उधर तू कब हाथ छुड़ा कर भागा, पता ही नहीं चला। जैसे ही मैं देखूँ पवन कहाँ है, हे भगवान तू तो जंतर-मंतर की ऊँची सीढ़ी चढ़ कर सबसे ऊपर खड़ा था। मेरी हालत ऐसी हो गई कि काटो तो खून नहीं। मैंने इनकी तरफ देखा। इन्होंने एक बार गुस्से से मुझे घूरा, 'ध्यान नहीं रखती?'

घबरा ये भी रहे थे पर तुझे पता नहीं चलने दिया। सीढ़ी के नीचे खड़े हो कर बोले, 'बेटा, बिना नीचे देखे, सीधे उतर आओ, शाबाश, कहीं देखना नहीं।'

फिर मुझसे बोले, 'तुम अपनी हाय तौबा रोक कर रखो, नहीं तो बच्चा गिर जाएगा। तू खम्म-खम्म सारी सीढ़ियाँ उतर आया। हम दोनों ने उस दिन प्रसाद चढ़ाया। भगवान ने ही रक्षा की तेरी ।'

बार-बार सुन कर बच्चों को ये किस्से ऐसे याद हो गए थे जैसे कहानियाँ।

पवन कहता, 'माँ, जब तुम बीमार पड़ी थीं, छोटू स्कूल से सीधे अस्पताल आ गया था।'

'सच्ची। ऐसा इसने खतरा मोल लिया। के.जी. दो में पढ़ता था। सेंट एंथनी में तीन बजे छुट्टी हुई। आया जब तक उसे ढूँढ़े, बस में बिठाए, ये चल दिया बाहर।'

पवन कहता, 'वैसे माँ अस्पताल स्कूल से दूर नहीं है।'

'अरे क्या? चौराहा देखा है वह बालसनवाला। छह रास्ते फूटते हैं वहाँ। कितनी ट्रकें चलती हैं। अच्छे-भले लोग चकरघिन्नी हो जाते हैं सड़क पार करने में और यह एड़ियाँ अचकाता जाने कैसे सारा ट्रैफिक पार कर गया कि मम्मा के पास जाना है।

सघन कहता, 'हमें पिछले दिन पापा ने कहा था कि तुम्हारी मम्मी मरनेवाली है। हम इसलिए गए थे।'

'तुमने यह नहीं सोचा कि तुम कुचल जाओगे।'

'नहीं।' सघन सिर हिलाता, 'हमें तो मम्मा चाहिए थी।'

अब उसके बिना कितनी दूर रह रहा है सघन। क्या अब याद नहीं आती होगी? कितना काबू रखना पड़ता होगा अपने पर।

भाग्यवान होते हैं व जिनके बेटे बचपन से होस्टल में पलते हैं, दूर रह कर पढ़ाई करते हैं और एक दिन बाहर-बाहर ही बड़े होते जाते हैं। उनकी माँओं के पास यादों के नाम पर सिर्फ खत और खबर होती है, फोन पर एक आवाज

और क्रिसमस के ग्रीटिंग कार्ड। पर रेखा ने तो रच-रच कर पाले हैं अपने बेटे। इनके गू-मूत में गीली हुई है, इनके आँसू अपनी चुम्मायों से सुखाए हैं, इनकी हँसी अपने अंतस में उतारी है।

राकेश कहते हैं, 'बच्चे अब हमसे ज्यादा जीवन को समझते हैं। इन्हैं कभी पीछे मत खींचना।'

रात को पवन का फोन आया। माता-पिता दोनों के चेहरे खिल गए।

'तबियत कैसी है?'

'एकदम ठीक ।' दोनों ने कहा। अपनी खाँसी, एलर्जी और दर्द बता कर उसे परेशान थोड़े करना है।

'छोटू की कोई खबर?'

'बिलकुल मज़े में है। आजकल चीनी बोलना सीख रहा है।'

'वी.सी.डी. पर पिक्चर देख लिया करो, माँ।'

'हाँ, देखती हूँ।' साफ झूठ बोला रेखा ने। उसे न्यू सी.डी. में डिस्क लगाना कभी नहीं आएगा।

पिछली बार पवन माइक्रोवेव ओवन दिला गया था। फोन पर पूछा, 'माइक्रोवेव से काम लेती हो?'

'मुझे अच्छा नहीं लगता। सीटी मुझे सुनती नहीं, मरी हर चीज ज्यादा पक जाए। फिर सब्जी एकदम सफेद लगे जैसे कच्ची है।'

'अच्छा यह मैं ले लूँगा, आपको ब्राउनिंगवाला दिला दूँगा।'

'स्टैला कहाँ है?'

पता चला उसके माँ-बाप शिकागो से वापस आ गए हैं। पवन ने चहकते हुए बताया, 'अब छोटी ममी बिजनेस सँभालेगी। स्टैला बस विजिट दे सकेगी।'

विजिट शब्द खटका पर वे उलझे नहीं। फिर भी फोन रखने के पहले रेखा के मुँह से निकला, 'तभी हमसे मिलने नहीं आए।'

'आएँगे माँ, पहले तो जैटलैग (थकान) रहा, अब बिजनेस में घिरे हैं। वैसे आपकी बहू आप लोगों की मुलाकात प्लान कर रही है। वह चाहती है किसी हॉलीडे रिसोर्ट (सैर सपाटे की जगह) में आप चारों इकट्ठे दो-तीन दिन रहो। वे लोग भी आराम कर लेंगे और आपके लिए भी चेंज हो जाएगा।'

'इतने तामझाम की क्या जरूरत है? उन्हें यहाँ आना चाहिए।'

'ये तुम स्टैला से फोन पर डिसकस कर लेना। बहुत लंबी बात हो गई, बाय ।'

कुछ देर बाद ही स्टैला का फोन आया। 'मॉम, आप कंप्यूटर ऑन रखा करो। मैंने कितनी बार आपके ई-मेल पर मैसेज दिया। ममी ने भी आप दोनों को हैलो बोला था, पर आपका सिस्टम ऑफ था।'

'तुम्हें पता ही है, जब से छोटू गया हमने कंप्यूटर पर खोल उढ़ा कर रख दिया है।'

'ओ नो माम। अगर आपके काम नहीं आ रहा तो यहाँ भिजवा दीजिए। मैं मँगवा लूँगी। इतनी यूजफुल चीज आप लोग वेस्ट कर रहे हैं।'

रेखा कहना चाहती थी कि उसके माता-पिता उनसे मिलने नहीं आए। पर उसे लगा शिकायत उसे छोटा बनाएगी। वह ज्ब्त कर गई। लेकिन जब स्टैला ने उसे अगले महीने वाटर पार्क के लिए बुलावा दिया, उसने साफ इनकार कर दिया, 'मेरी छुट्टियाँ खतम हैं। मैं नहीं आ सकती। ये चाहें तो चले जाएँ।'

इस आयोजन में राकेश की भी रुचि नहीं थी।

कई दिनों के बाद रेखा और राकेश इंजीनियरींग कॉलेज परिसर में घूमने निकले। एक-एक कर परिचित चेहरे दिखते गए। अच्छा लगता रहा। मिन्हाज साहब ने कहा, 'घूमने में नागा नहीं करना चाहिए। रोज घूमना चाहिए, चाहे पाँच मिनट घूमो।' उन्हीं से समाचार मिला। कॉलोनी के सोनी साहब को दिल का दौरा पड़ा था, हॉस्पिटल में भरती हैं।

रेखा और राकेश फिक्रमंद हो गए। मिसेज सोनी चौंसठ साल की गँठियाग्रस्त महिला है। अस्पताल की भागदौड़ कैसे सँभालेगी?

'देखो जी, कल तो मैंने भूषण को बैठा दिया था वहाँ पर। आज तो उसने भी काम पर जाना था।'

रेखा और राकेश ने तय किया वे शाम को सोनी साहब को देख कर आएँगे।

पर सोनी के दिल ने इतनी मोहलत न दी। वह थक कर पहले ही धड़कना बंद कर बैठा। शाम तक कॉलोनी में अस्पताल की शव वाहिका सोनी का पार्थिव शरीर और उनकी बेहल पत्नी को उतार कर चली गई।

सोनी की लड़की को सूचना दी गई। वह देहरादून ब्याही थी। पता चला वह अगले दिन रात तक पहुँच सकेगी। मिसेज सोनी से सिद्धार्थ को फोन नंबर ले कर उन्हीं के फोन से इंटरनेशनल कॉल मिलाई गई।

मिसेज सोनी पति के शोक में एकदम हतबुद्धि हो रही थीं। फोन में वे सिर्फ रोती और कलपती रहीं, 'तेरे डैडी, तेरे डैडी. . .' तब फोन मिन्हाज साहब ने सँभाला, 'भई सिधारथ, बड़ा ही बुरा हुआ। अब तू जल्दी से आ कर अपना फर्ज पूरा कर। तेरे इंतजार में फ्यूनरल (दाह संस्कार) रोक के रखें?'

उधर से सिद्धार्थ ने कहा, 'अंकल, आप ममी को सँभालिए। आज की तारीख सबसे मनहूस है। अंकल, मैं जितनी भी जल्दी करूँगा, मुझे पहुँचने में हफ्ता लग जाएगा।'

'हफ्ते भर बॉडी कैसे पड़ी रहेगी?' मिन्हाज साहब बोले।

'आप मुर्दा घर में रखवा दीजिए। यहाँ तो महीनों बॉडी मारच्यूरी में रखी रहती है। जब बच्चों को फुर्सत होती है फ्यूनरल कर देते हैं।'

'वहाँ की बात और है। हमारे मुलुक में एयरकंडीशंड मुर्दा घर कहाँ हैं। ओय पुत्तर तेरा बाप उप्पर चला गया तू इन्नी दूरों बैठा बहाने बना रहा है।'

'जरा मम्मी को फोन दीजिए।'

कॉलोनी के सभी घरों के लोग इंतजाम में जुट गए। जिसको जो याद आता गया, वही काम करता गया। सवेरे तक फूल, गुलाल, शाल से अर्थी ऐसी सजी कि सब अपनी मेहनत पर खुद दंग रह गए। पर इस दारुण कार्य के दौरान कई लोग बहुत थक गए। मिन्हाज साहब के दिल की धड़कन बढ़ गई। उनके लड़के ने कहा, 'डैडी, आप रहने दो, मैं घाट चला जाता हूँ।'

भूषण ने ही मुखाग्नि दी।

रेखा, मिसेज गुप्ता, मिसेज यादव, मिसेज सिन्हा और अन्य स्त्रियाँ मिसेज सोनी के पास बैठी रहीं। मिसेज सोनी अब कुछ संयत थीं, 'आप सब ने दुख की घड़ी में साथ दिया।'

'यह तो हमारा फर्ज था।' कुछ आवाजें आईं।

रेखा के मुँह से निकल गया, 'ऐसा क्यों होता है कि कुछ लोग फर्ज पहचानते हैं, कुछ नहीं। अरे सुख में नहीं, पर दुख में तो साथ दो।'

मिसेज सोनी ने कहा, 'अपने बच्चे के बारे में कुछ भी कहना बुरा लगता है पर सिद्धू ने कहा मैं किसी को बेटा बना कर सारे काम करवा लूँ। ऐसा भी कभी होता है ।'

'और रेडीमेड बेटे मिल जाएँ, यह भी कहाँ मुमकिन है। बाजार में सब चीज मोल जाती है, पर बच्चे नहीं मिलते।'

'ऐसा ही पता होता है कि पच्चीस बरस पहले परिवार नियोजन क्यों करते। होने देते और छह बच्चे। एक न एक तो पास रहता।'

'वैसे इतनी दूर से जल्दी से आना हो भी नहीं सकता था।' मिसेज मजीठिया ने कहा, 'हमारी सास मरी तो हमारे देवर कहाँ आ पाए।'

'पर आपके पति तो थे ना? उन्होंने अपना फर्ज निभाया।'

इस अकस्मिक घटना ने सबके लिए सबक का काम किया। सभी ने अपने वसीयतनामे सँभाले और बैंक खातों के ब्यौरे। क्या पता कब किसका बुलावा आ जाए। आलमारी में दो-चार हजार रुपए रखना जरूरी समझा गया।

कॉलोनी के फुरसतपसंद बुजुर्गों की विशेषता थी कि वे हर काम मिशन की तरह हाथ में लेते। जैसे कभी उन्होंने अपने दफ्तरों में फाइलें निपटाई होंगी वैसे वे एक एक कर अपनी जिम्मेदारियाँ निपटाने में लग गए। सिन्हा

साहब ने कहा, 'भई, मैंने तो एकादशी को गऊदान भी जीते जी कर लिया। पता नहीं अमित बंबई से आ कर यह सब करे या नहीं।'

गुप्ता जी बोले, 'ऐसे स्वर्ग में सीट रिजर्व नहीं होती। बेटे का हाथ लगना चाहिए।'

श्रीवास्तव जी के कोई लड़का नहीं था, इकलौती लड़की ही थी। उन्होंने कहा, 'किसी के बेटा न हो तो?'

'तब उसे ऐसी तड़फड़ नहीं होती जो सोनी साहब की मिसेज को हुई।'

रेखा यह सब देख सुन कर दहशत से भर गई। एक तो अभी इतनी उम्रदराज वह नहीं हुई थी कि अपना एक पैर श्मशान में देखें। दूसरे, उसे लगता ये सब लोग अपने बच्चों को खलनायक बना रहे हैं। क्या बूढ़े होने पर भावना समझने की सामर्थ्य जाती रहती है?

कॉलोनी के हर कठोर निर्णय पर उसे लगता मैं ऐसी नहीं हूँ, मैं अपने बच्चों के बारे में ऐसी क्रूरता से नहीं सोचती। मेरे बच्चे ऐसे नहीं हैं।

रात की आखिरी समाचार बुलेटिन सुन कर वे अभी लेटे ही थे कि फोन की लंबी घंटी बजी। घंटी के साथ-साथ दिल का तार भी बजा, 'जरूर छोटू का फोन होगा, पंद्रह दिन से नहीं आया।' फोन पर बड़कू पवन बोल रहा था, 'हैलो माँ, कैसी हो? आपने फोन नहीं किया?'

'किया था पर आंसरिंग मशीन के बोलने से पहले काट दिया। तुम घर में नहीं टिकते।'

'अरे माँ, मैं तो यहाँ था ही नहीं। ढाका चला गया था, वहाँ से मुंबई उतरा तो सोचा स्टैला को भी देखता चलूँ। वह क्या है उसकी शकल भी भूलती जा रही थी।'

'तुमने जाने की खबर नहीं दी।'

'आने की तो दे रहा हूँ। मेरा काम ही ऐसा है। अटैची हर वक्त तैयार रखनी पड़ती है। और सुनो, तुम्हारे लिए ढाकाई साड़ियाँ लाया हूँ ।'

निहाल हो गई रेखा। इतनी दूर जा कर उसे माँ की याद बनी रही। तुरंत बहू का ध्यान आया।

'स्टैला के लिए भी ले आनी थी ।'

'लाया था माँ, उसे और छोटी ममी को पसंद ही नहीं आईं। स्टैला को वहीं से जींस दिला दी। चलो तुम्हारे लिए तीन हो गईं। तीन साल की छुट्टी।'

'मैंने तो तुमसे माँगी भी नहीं थीं।' रेखा का स्वर कठिन हो आया।

एक अच्छे मैनेजर की तरह पवन पिता से मुखातिब हुआ, 'पापा, इतवार से मैं स्वामी जी के ध्यान शिविर में चार दिन के लिए जा रहा हूँ। सिंगापुर से मेरे बॉस अपनी टीम के साथ आ रहे हैं। वे ध्यान शिविर देखना चाहते हैं। आप

भी मनपक्कम आ जाइए। आपको बहुत शांति मिलेगी। अपने अखबार का एक विशेषांक प्लान कर लीजिए स्वामी जी पर। विज्ञापन खूब मिलेंगे। यहाँ उनकी बहुत बड़ी शिष्य मंडली हैं।'

राकेश हूँ हाँ करते रहे। उनके लिए जगह की दूरी, भाषा का अपरिचय, छुट्टी की किल्लत, कई रोड़े थे राह में। वे इसी में मगन थे कि पुन्नू उन्हें बुला रहा है।

'छोटू की कोई खबर?'

'हाँ, पापा उसका ताइपे से खत आया था। जॉब उसका ठीक चल रहा है पर उसकी चाल-ढाल ठीक नहीं लगी। वह वहाँ की लोकल पालिटिक्स में हिस्सा लेने लगा है। यह चीज घातक हो सकती है।'

राकेश घबरा गए, 'तुम्हें उसे समझाना चाहिए।'

'मैंने फोन किया था, वह तो नेता की तरह बोल रहा था। मैंने कहा, नौकरी को नौकरी की तरह करो, उसमें उसूल, सिद्धांत ठोकने की क्या जरूरत है।'

'उसने क्या कहा?'

'कह रहा था - भैया, यह मेरे अस्तित्व का सवाल है।'

रेखा को संकट का आभास हुआ। उसने फोन राकेश से ले लिया, 'बेटे, उसको कहो फौरन वापस आ जाए। उसे चीन-ताइवान के पचड़े से क्या मतलब।'

'माँ, मैं समझा ही सकता हूँ। वह जो करता है उसकी जिम्मेदारी है। कई लोग ठोकर खा कर ही सँभलते हैं।'

'पुन्नू, तेरा इकलौता भाई है सघन, तू पल्ला झाड़ रहा है।'

'माँ, तुम फ़ोन करो, चिट्ठी लिखो। अड़ियल लोगों के लिए मेरी बरदाश्त काफी कम हो गई है। मेरी कोई शिकायत मिले तो कहना।'

दहशत से दहल गई रेखा। तुरंत छोटू को फोन मिलाया। वह घर पर नहीं था। उसे ढूँढ़ने में दो-ढाई घंटे लग गए। इस बीच माता-पिता का बुरा हाल हो गया। राकेश बार-बार बाथरूम जाते। रेखा साड़ी के पल्लू में अपनी खाँसी दबाने में लगी रही।

अंततः छोटू से बात हुई। उसने समीकरण समझाया।

'ऐसा है पापा, अगर मैं लोकल लोगों के समर्थन में नहीं बोलूँगा तो ये मुझे नष्ट कर देंगे।'

'तो तुम यहाँ चले आओ। इन्फोटेक (सूचना तकनीकी) में यहाँ भी अच्छी से अच्छी नौकरियाँ हैं।'

'यहाँ मैं जम गया हूँ।'

'परदेस में आदमी कभी नहीं जम सकता। तंबू का कोई न कोई खूँटा उखड़ा ही रहता है।'

'हिंदुस्तान अगर लौटा तो अपना काम करूँगा।'

'यह तो और भी अच्छा है।'

'पर पापा, उसके लिए कम से कम तीस-चालीस लाख रुपए की जरूरत होगी। मैं आपको लिखने ही वाला था। आप कितना इंतजाम कर सकते हैं, वाकी जब मैं जमा कर लूँ तब आऊँ।'

राकेश एकदम गड़बड़ा गए, 'तुम्हें पता है घर का हाल। जितना कमाते हैं उतना खर्च कर देते हैं। सारा पोंछ-पाँछ कर निकालें तो भी एक-डेढ़ से ज्यादा नहीं होगा।'

'इसी बिना पर मुझे वापस बुला रहे हैं। इतने में तो पी.सी.ओ. भी नहीं खुलेगा।'

'तुमने भी कुछ जोड़ा होगा इतने बरसों में।'

'पर वह काफी नहीं है। आपने इन बरसों में क्या किया? दोनों बच्चों का खर्च आपके सिर से उठ गया, घूमने आप जाते नहीं, पिक्चर आप देखते नहीं, दारू आप पीते नहीं, फिर आपके पैसों का क्या हुआ?'

राकेश आगे बोल नहीं पाए। बच्चा उनसे रुपए आने पाई में हिसाब माँग रहा था।

रेखा ने फोन झपट कर कहा, 'तू कब आ रहा है छोटू?'

सघन ने कहा, 'माँ जब आने लायक हो जाऊँगा तभी आऊँगा। तुम्हें थोड़ा इंतजार करना होगा।'

शीर्ष पर जाएँ